अंक : 2, दिसम्बर 2012

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
दिसम्बर 2012, अंक 2

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी॰ई॰ए॰जी॰ के द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरमेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम॰जी॰ कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004, फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geag_india@yahoo.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं॰ 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज, 2nd ब्लाक, 3rd स्टेज,
बनशंकरी, बैंगलोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512, +91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : amebang@giasbg01.vsnl.net.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंगलोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक : के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन
प्रबन्ध सम्पादक : टी.एम.राधा, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
अरुण कुमार शिवाराय, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
एस॰ शोभा मइया, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, इण्डोनेशियन, पश्चिमी अफ्रीकन, ब्राजीलियन एवं चाइनीज संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कनड, उड़िया एवं तेलगू

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी॰ई॰ए॰जी॰ के समन्वयन में ए॰एम॰ई॰ द्वारा प्रकाशित

प्रिय पाठक

आप सभी को लीज़ा इण्डिया टीम की तरफ से नव वर्ष 2013 की हार्दिक शुभकामनाएं। आपके समक्ष हिन्दी अनुवाद का दिसम्बर 2012 अंक प्रस्तुत है। आपके उत्साहवर्धक सहयोग के लिए धन्यवाद। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जर्मनी की एक दाता संस्था माइजेरियर इस गतिविधि को 2011–13 की अवधि के लिए सहयोग प्रदान करने पर सहमत हो गई है। इस सहयोग के साथ हम अधिकाधिक पाठकों और जमीन से जुड़ कर काम करने वाली संगठनों तक अपनी पहुँच बनाना चाहते हैं। हमें यह पत्रिका प्रेषित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता है। कृपया पत्रिका के साथ संलग्न फार्म को भरकर हमें वापस भेजें।

हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हिन्दी अंक को अधिक प्रशंसा मिल रही है। स्थानीय भाषा में होने के कारण बहुत से पाठक इसे अच्छे ढंग से समझ पा रहे हैं। हमें वास्तविक लेखों के लिए भी सकारात्मक प्रतिक्रिया मिल रही है।

इस अंक में विविध विषयों जैसे पारम्परिक संस्थाओं एवं संसाधनों की वर्तमान में प्रासंगिकता, पर्यावरण सम्मत खेती हेतु परम्परागत संसाधनों की उपयुक्तता एवं खेती के साथ पशुपालन का समन्वय व युवाओं को खेती के प्रति प्रोत्साहित करने आदि को शामिल किया गया है। आशा है कि इसे पढ़कर आपको प्रसन्नता मिलेगी। पत्रिका हेतु आपके सुझावों का स्वागत है।

लीज़ा इण्डिया टीम
दिसम्बर, 2012

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपना उत्पादन और आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

पम्प के बिना खेती **5**

श्री पादरे

कर्नाटक और केरल के संयुक्त क्षेत्र में बहुत से किसान अपनी फसलों की जल आवश्यकता पूरी करने हेतु पारम्परिक जल संग्रहण ढांचा "सुरंग" पर आश्रित रहते हैं। सुरंग पानी के लिए मानव द्वारा बनायी गयी गुफा है जो आकर्षण शक्ति पर काम करती है और इसे चलाने के लिए किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, दक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थायित्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गाँव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्त्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–www.amefound.org

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्धान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, धर्म आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

पशुपालन और पारिस्थितिकी खेती 8
रत्नगिरी के किसानों की प्राथमिकता

नित्या सम्बामूर्ति घाटगे

रत्नागिरी के युवा किसानों ने पशुपालन के साथ एकीकृत लघु स्तरीय खेती के माध्यम से क्षेत्र में अनोखी विविधता को सफलता पूर्वक संरक्षित किया है। स्थाई खेती के दीर्घकालिक लाभों को देखते हुए ये युवा किसान स्थाई खेती गतिविधियों को भी अन्य क्षेत्रों में प्रसारित करने का कार्य कर रहे हैं।

पारम्परिक सामाजिक संस्थाओं से मिली सीख 11

एस0टी0एस0 रेड्डी, एन0वी0 हीरेमथ, राजा मुहम्मद और अशोक अलूर

मुडियानुर तालाब का पारम्परिक प्रबन्धन सभी परिवारों की खेती के लिए पानी के समान वितरण की सुनिश्तिता, समाज में विभिन्न भूमिकाओं के सम्मान को प्रोत्साहन देने एवं अलग–अलग पार्टियों के बीच विवाद के समाधान को संभव बनाते हुए प्रबन्धन तंत्र का एक दिलचस्प उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह पाया गया है कि इस तरह की गतिविधियाँ केवल गांव वालों की सिंचाई की आवश्यकता को पूरी करने के स्तर पर ही प्रभावी नहीं होतीं, वरन् इनके माध्यम से भू–जल संरक्षण भी किया जा सकता है। उन लोगों के साथ अधिक सीखा जा सकता है, जिन लोगों ने आज समुदाय आधारित टैंक प्रबन्धन के अधिक प्रभावी व टिकाऊ प्रणाली को बनाया है।

खेती के लिए खेती से सीखना 15

नन्दीश

किसी भी अन्य व्यवसाय की तरह खेती में भी निष्ठा, आपसी समझदारी, लगातार सीखने, हमेशा नये विचारों को अपनाने और इन सबसे ऊपर खेती को विशाल पारिस्थितिकी तंत्र के एक भाग के तौर पर देखने की इच्छा की आवश्यकता होती है। यहां पर एक युवा किसान की कहानी दी गयी है, जो अत्यन्त देख–भाल करते हुए न केवल अपनी खेती को पोषित करता है, वरन् पर्यावरण के प्रति भी संवेदनशील है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, दिसम्बर 2012

5 पम्प के बिना खेती
श्री पादरे

8 पशुपालन और पारिस्थितिकी खेती : रत्नगिरी के किसानों.....
नित्या सम्बामूर्ति घाटगे

10 खेती में युवा
एल. नारायण रेड्डी

11 पारम्परिक सामाजिक संस्थाओं से मिली सीख
एस0टी0एस0 रेड्डी, एन0वी0 हीरेमथ, राजा मुहम्मद और अशोक अलूर

15 खेती के लिए खेती से सीखना
नन्दीश

18 जीवन कौशल और आजीविका
मंजूनाथ एच

जीवन कौशल और आजीविका 18

मंजूनाथ एच

किसान परिवारों के लड़के खेती की बढ़ती लागत एवं अन्य समस्याओं के कारण खेती को घाटे का सौदा मानते हुए कृषि से हटकर अन्य विकल्पों की तलाश कर रहे हैं। बदाकू ने इन युवा किसानों की मदद से इस समस्या को पहचाना और उन्हें ये महसूस कराया कि खेती एक स्थाई आजीविका विकल्प के तौर पर है और स्थाई खेती की पद्धति में उनकी क्षमता अभिवृद्धि की जा सकती है।

यह अंक...

खेती में पारम्परिक सामाजिक संस्थाओं की महत्ता, खेती में युवाओं की बढ़ती रूचि एवं लागत कम करने की विविध तकनीकों पर आधारित लेखों से सुसज्जित लीज़ा इण्डिया का दिसम्बर अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। इस अंक में एक ओर जहां खेती से विमुख हो रहे युवाओं को पुनः खेती से जोड़ने की चुनौती है, तो दूसरी ओर खेती के प्रमुख घटक सिंचाई हेतु पारम्परिक संसाधनों के उपयोग के पारम्परिक प्रबन्धन का महत्व भी प्रदर्शित किया गया है, जो निश्चित तौर पर पाठकों के लिए उपयोगी होगा।

पत्रिका का पहला लेख श्री पादरे द्वारा लिखित ''पम्प के बिना खेती'' में स्पष्ट उल्लिखित है कि केरल के पारम्परिक जल संग्रहण ढांचे सुरंग बगैर किसी अतिरिक्त बाहरी लागत के आज भी सिंचाई हेतु उपयोगी व उपयुक्त हैं, तो श्री नित्या सम्बामूर्ति घाटगे द्वारा लिखित दूसरा लेख ''पशुपालन और पारिस्थितिकी खेती : रत्नागिरी के किसानों की पहली प्राथमिकता'' पर्यावरण सम्मत खेती के साथ पशुपालन, किसानों की रूचि एवं इसमें स्वयंसेवी संगठनों के योगदान को प्रदर्शित करता है। पारम्परिक जलसंग्रह स्रोतों के प्रबन्धन हेतु आज भी परम्परागत व्यवस्था की प्रासंगिकता को प्रदर्शित करता लेख ''पारम्परिक सामाजिक संस्थाओं से मिली सीख'' जो एस0टी0एस0 रेड्डी, एन0वी0हीरेमथ, राजा मुहम्मद और अशोक अलूर द्वारा लिखित लेख है, दूसरी ओर श्री नन्दीश के अपने स्वयं के अनुभवों पर आधारित लेख ''खेती के लिए खेती से सीखना'' भी है, जो यह प्रदर्शित करता है कि किस प्रकार एक किसान अपने स्वयं के अनुभवों से सीख कर खेती को उन्नत एवं कम लागत का बना सकता है। इस प्रकार के लेख अन्य किसानों के लिए ग्राह्य हो सकते है।

खेती में युवाओं की अभिरूचि उत्पन्न करने के लिए मंजूनाथ एच द्वारा लिखित लेख ''जीवन कौशल और आजीविका'' भी है, जिसमें एक ऐसे किसान स्कूल की कहानी दर्शायी गयी है, जो पलायन करने वाले युवा किसानों को रोककर उनके लिए खेती से सम्बन्धित विभिन्न अनुभव आधारित पाठ्यक्रम तैयार कर उनका मार्गदर्शन कर रही है। इसके साथ ही पत्रिका का स्थाई स्तम्भ श्री नारायण रेड्डी का कॉलम भी है, जिसमें उन्होंने खेती में अपने अनुभवों को पिरोकर युवाओं के लिए मार्गदर्शक के रूप में सामने रखा है।

अन्ततः एक बार पुनः विषय चयन की उपयुक्तता एवं सार्थकता पर आप सभी पाठकों के सुझावों एवं प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा में...

• सम्पादक मण्डल

पम्प के बिना खेती

श्री पादरे

कर्नाटक और केरल के संयुक्त क्षेत्र में बहुत से किसान अपनी फसलों की जल सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूरी करने हेतु पारम्परिक जल संग्रहण ढांचा ''सुरंग'' पर आश्रित रहते हैं। सुरंग पानी के लिए मानव द्वारा बनायी गयी गुफा है, जो आकर्षण शक्ति पर काम करती है और इसे चलाने के लिए किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती।

सुरंग से पानी एकत्र करने हेतु टैंक

''यदि हमारे क्षेत्र में सुपारी की खेती करने वाले बहुत से किसानों की तरह हमें ऊंचे हिस्सों की सिंचाई हेतु पम्प की सहायता लेनी पड़े तो हमें खेती को अलविदा कहना पड़ सकता है।'' ऐसा कहना है, कर्नाटक के एक किसान का।

दक्षिणी कर्नाटक जिले के बुन्टवल तालुक के खुद खेती करने वाले 55 वर्षीय श्री गोविन्द भट्ट मनिमूले के शब्दों में ''क्या सौभाग्य से शत–प्रतिशत जल सुरक्षित है।'' ऊर्जा वितरण व आपूर्ति व्यवस्था सुचारू न होने के बावजूद कर्नाटक के किसानों को कोई भय नहीं है क्योंकि वे लोग सिंचाई के लिए बिजली अथवा डीजल पर निर्भर नहीं हैं। 2.5 हेक्टेयर खेती वाले परिवार परिश्रम के बल पर अपने खेतों की सिंचाई सफलतापूर्वक कर पा रहे हैं। यहाँ की प्रमुख फसल अखरोट व नारियल है। जबकि अन्तः फसल के तौर पर पीपर, केला और रेशमकीट से इन लोगों को अतिरिक्त आमदनी हो जाती है।

22 सुरंगों के माध्यम से पूरी पहाड़ी पर फैले 1200 अखरोट व 300 नारियल के वृक्षों के लिए अपेक्षित मात्रा में पानी उपलब्ध कराया जाता है। प्रत्येक सुरंग न्यून मात्रा में पानी देते हैं। अनुमानतः एक सुरंग से एक अंगूठे की मोटाई के बराबर पानी निकलता है। यदि मापा जाये तो एक घण्टे में 200 से 600 लीटर तक पानी देना इनकी क्षमता होगी। इन सुरंगों से निकले पानी को एक विकेन्द्रित रास्ते से पांच भूमिगत टैंकों में एकत्र किया जाता है। कुल 9 सुरंगों से एकत्रित पानी के तालाब से ऊपरी क्षेत्र में स्थित अखरोट की खेती की जाती है। एकत्रित पानी को पेड़ों तक सूक्ष्म सिंचाई के माध्यम से सावधानीपूर्वक पहुंचाया जाता है।

गोविन्द भट्ट तीन प्रकार से पानी देते हैं – बूंद विधि, अखरोट पर छिड़काव और नारियल के लिए बुलबुला उठाकर। बूंद विधि से पानी बूंद–बूंद कर प्रतिघण्टा आठ लीटर की दर से रिसता है और प्रत्येक अखरोट पौधें को दो–दो बूँद पानी मिलता है। दूसरी तरफ छिड़काव विधि से निकलने वाला पानी एक नन्हें कलम की भांति होता है, जो एक घण्टे में 16 लीटर पानी देता है। एक फागर से सिर्फ एक पेड़ की सिंचाई की जा सकती है। आखिरी बुलबुला विधि एक बड़े कलम की भांति होता है, जो एक घण्टे में 20 लीटर पानी देता है।

भट्ट पूरी सिंचाई समयसारिणी को कुछ इस तरह प्रबन्धित करते हैं कि प्रत्येक दिन, लगभग दो घण्टे की सिंचाई होती है। उनका सौभाग्य रहा है कि गर्मियों में सुरंग से निकलने वाले जल की मात्रा में ह्रास तो आया, परन्तु ह्रास का स्तर अति न्यून रहा। इसकी वजह से ही वर्ष 2007 में गोविन्द भट्ट ने सूक्ष्म सिंचाई का प्रयोग शुरू किया। उन्होंने पानी छिड़कने की नली के साथ इसे प्रबन्धित किया। यद्यपि कि इसके पहले लगभग 1990 तक गढ्ढे में एकत्र पानी को हाथों से छिड़कने की प्रक्रिया प्रचलन में थी।

हाथों से पानी छिड़काव

हाथों से पानी छिड़कने का कार्य निश्चित तौर पर एक बेहद भारी एवं उबाऊ कार्य है। इसके लिए अखरोट की पत्तियों से त्रिकोणीय कटोरे के आकार का बर्तन बनाया जाता था। पानी बगीचे की तरफ से एक लम्बे भूमिगत चैनल के माध्यम से आता था, जिसका हर साल रख–रखाव ही बहुत श्रमसाध्य होता था। नीचे की तरफ झुके 'यू' आकार के यन्त्र से पानी कई बार में प्रत्येक पेड़ तक पहुंचता था। इसके बाद लकड़ी से बना एक यन्त्र प्रचलन में आया, जिसके माध्यम से काम करने वाला खड़ा होकर पानी छिड़क सके, लेकिन भट्ट ने अपने पारम्परिक सुपारी के खोल से बने डिब्बे को पाइप के साथ इस तरह से व्यवस्थित किया कि पाइप से सिंचाई की जा सके।

इस क्षेत्र में भूमि बिलकुल ढलवां है, जिससे यहां पर केवल सीढ़ीदार खेती ही संभव थी। प्रत्येक सीढ़ी की चौड़ाई बहुत कम होने के कारण वहां पर नारियल के पौधे लगाये गये क्योंकि अत्यन्त संकरी पगडंडियाँ होने के कारण कुछ पंक्तियों में भी सुपारी पौध नहीं उगायी जा सकती थी। खेत का प्रसार कदम–दर–कदम हुआ। बचत का प्रयोग कर एक दशक में इस परिवार ने सिर्फ एक छोटी पट्टी को बराबर किया। सबसे दिलचस्प तो यह रहा कि प्रत्येक

फोटो : सुधीर त्रिपाठी

सिंचित जड़ क्षेत्र

भूखण्ड के लिए परिवार ने अग्रिम तौर पर एक पानी उपलब्धता का परीक्षण किया था।

एक नये भूखण्ड की प्रस्तावित समतलीकरण के साथ लगभग चालीस फुट ऊंचाई का एक सुरंग खोदा गया। यदि मात्र पानी की ही पर्याप्त उपलब्धता रहे, तो सीढ़ीदार खेती हो जाती है और सौभाग्य से, इस परिवार द्वारा खोदे गये 25 सुरंगों में से सिर्फ 3 सुरंग असफल रहे।

आपस में जुड़े टैंक

सभी टैंक आपस में अन्तर्निहित पाइप संजाल के माध्यम से आन्तरिक रूप से जुड़े होते हैं। इसलिए यदि ऊपर का टैंक भर कर बहने लगता है, तो पानी का रूख तुरन्त अपने– आप ही नीचे वाले टैंक की तरफ मुड़ जाता है। ''50–60 वर्षों पहले एक ऐसा समय था, जब हमें गर्मियों में भयंकर सूखा का सामना करना पड़ा था। पानी टैंक के एक दम तली में चला गया था और हमें अपने घरेलू उपभोग के लिए भी काफी कठिनाई उठानी पड़ी थी।'' गोविन्द भट्ट के पिता 81 वर्षीय श्री अच्युत भट्ट याद करते हुए कहते हैं। ''उस समय शिवरात्रि के बाद – (शिवरात्रि फरवरी में पड़ता है) हमारे पास बहुत पानी था, वह भी इसलिए कि कुछ वर्षों में हमने सुरक्षात्मक सिंचाई के रूप में सिंचाई की और इसके लिए शारीरिक श्रम करते हुए घड़े से पानी ढोकर लाते थे। उन वर्षों में हमारे पास इतना पानी नहीं था कि हम सभी खेतों की सिंचाई एक साथ कर सकते थे।

वर्ष 1987 में एक तरह से जल संकट खत्म हुआ मान लिया गया था क्योंकि तभी यहाँ पर बोरवेल की तकनीक तभी प्रचलित हो गयी थी, परन्तु भट्ट ने इसमें न्यूनतम रूचि ली। वे भली– भांति जानते थे कि यह एक स्थाई तकनीक नहीं है और इसकी वजह से उनकी खेती का अस्तित्व समाप्त होगा, सिंचाई की गम्भीरता खत्म हो जायेगी। अतः बोरवेल के बजाय उनके परिवार ने अधिक सुरंगों के साथ अपनी किस्मत आजमाने का फैसला किया।

एक साल : एक सुरंग

लगभग एक दशक के समय में 6–7 सुरंग खोदे गये हैं। भट्ट ने सूखे के इतिहास को खत्म करने का निश्चय कर लिया था। उनके द्वारा नियमित रूप से सुरंगों की खुदाई (आफ सीजन को छोड़कर) की जाती रही। गांव वाले कहते भी थे कि ''मनिमूले अच्युत भट्ट प्रति वर्ष एक सुरंग खोदकर हम लोगों को प्रयोग हेतु देते हैं।''

इसी दौरान जल संग्रह हेतु एक विशाल टैंक निर्माण जल संकट प्रबन्धन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। अनुमानतः एक लाख

सुरंग

केरल के कसारगाड़ जिले व कर्नाटक के दक्षिणी कन्नड़ जिले के आस–पास के क्षेत्रों में पानी के लिए मनुष्यों द्वारा बनाई गयी गुफानुमा आकृति को सुरंग कहते हैं। इन क्षेत्रों में इस तरह के लगभग हजार पारम्परिक जल संग्रहण ढांचे हैं। सुरंग सामान्यतः पेयजल के लिए खोदा जाता है। कालान्तर में पम्पसेट और बोरवेल के प्रार्दुभाव के साथ यह विधा मृतप्राय सी हो गयी थी।

चालीस वर्षों बाद अच्युत भट्ट ने इस तकनीक को अपने गांव मनीला में पुनः अपनाया। युवा अच्युत भट्ट ने रूचि लेते हुए कुशल मजदूरों के माध्यम से अपने खेत में पहला सुरंग खुदवाने का कार्य पूरा किया। आज इनके गांव में लगभग 300 सुरंग होगें।

एक सुरंग सामान्यतः एक मौसम में पूरा हो जाता है। सुरंग खुदाई का कार्य सामान्यतः फरवरी से शुरू किया जाता है और मई तक इसे पूर्ण कर लिया जाता है। मानसून और उसके तुरन्त बाद के समय में मिट्टी में नमी की मात्रा बढ़ जाती है। अतः इस अवधि में सुरंग खुदाई का कार्य नहीं किया जाता है। सामान्यतः यहां पर कम से कम 40 मीटर की लम्बाई का सुरंग खोदा जाता है। मिट्टी के प्रकार के आधार पर इसकी लम्बाई घटाई–बढ़ाई भी जाती है। अतः इसमें 2 से 3 महीने का समय लग जाता है। सुरंग की चौड़ाई बस इतनी रखी जाती है कि एक सामान्य मनुष्य उसमें से गुजर सके। सुरंग खोदना एक कलात्मक व प्रशिक्षित व्यक्ति का कार्य होता है, जिसे 'कोलू' कहते हैं। आज गांव में ऐसे लोगों को उंगलियों पर गिना जा सकता है, जो सुरंग खोदने की कला में माहिर हैं। एक ''कोलू'' 2.5 फीट के सुरंग की खुदाई का 150 रू0 लेता है। यदि दूरी अधिक होती है, तो यह पैसा बढ़ जायगा, क्योंकि आने–जाने में समय लगेगा।

सुरंग के बारे में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इससे हमेशा धूल, बालू कण रहित प्रदूषण मुक्त पानी मिलता है और इसके लिए पम्पसेट की आवश्यकता भी नहीं होती है। दूसरी बात यह है कि ऊंचाई पर रहने वाले लोगों के लिए यह पानी संग्रहण एवं खेती करने हेतु सिंचाई का एकमात्र ऐसा साधन होता है, जहां तक लोगों की पहुंच हो पाना सम्भव होता है। यहां तक कि एक गरीब मजदूर भी अपने खाली समय में इंच–इंच कर सुरंग की खुदाई कर सकता है और वह इसे बिना कोई अतिरिक्त पैसा खर्च किये 2–3 माह में पूरा कर सकता है।

केरल के कसारगाड जिले में स्थित गांव बायरू को सुरंगों का गढ कहा जा सकता है। वर्तमान में यहां पर अनुमानतः 2000 सुरंगे होगीं।

फोटो : लेखक

सुपारी का यथेष्ट उत्पादन

लीटर पानी संग्रहण क्षमता वाले इस टैंक में वर्षा जल संग्रह होता है। चरणबद्ध तरीके से, ताजा पानी का संग्रह एवं पहले से एकत्रित पानी का प्रयोग सुरंग से बारी–बारी से होता है। इस प्रक्रिया से पानी की कमी दूर करने में मदद मिली है। इस पूरी गतिविधि के परिणाम सकारात्मक थे। यद्यपि कि नली सिंचाई संतोषजनक नहीं थी, फिर भी पानी की उपलब्धता में काफी वृद्धि हुई है। गोविन्द भट्ट बताते हैं कि ''हमारे मिट्टी की प्रकृति कुछ ऐसी है कि इसमें बहुत लम्बे समय तक नमी नहीं बनी रह सकती। हम एक सप्ताह में मात्र दो बार ही नली सिंचाई कर पाने में समर्थ थे। बूंद–बूंद पानी से बहुत लाभ नहीं दिखता था और पूरा बागीचा समग्र रूप से बेहद कमजोर था। उत्पादन के स्तर में भी अत्यन्त उतार–चढ़ाव था।

अच्युत भट्ट हंसते हुए कहते हैं ''एक समय था, जब एक चटाई बैग में 60–70 नारियल आ जाते थे, परन्तु अब तो सिर्फ 25 नारियल में ही एक चटाई बैग भर जाता है।''

सूखे का खात्मा

वर्ष 2007 में, सूक्ष्म सिंचाई पर रोक लगाने के बाद, खेत अच्छी तरह विकसित हुए। पानी की आवश्यकता कम होने के कारण वे प्रतिदिन सिंचाई कर सकते थे। उतार–चढ़ाव के स्तर को कम करते हुए फसल में भी अत्यन्त वृद्धि हुई।

गोविन्द भट्ट परिभाषित करते हुए कहते हैं कि ''अब हमारे पास 1500 ताड़ व अन्तः फसलों के लिए पर्याप्त पानी है। यद्यपि कि यहां पर अन्तः फसल है, परन्तु उनकी सिंचाई अलग से नहीं की जाती है। क्योंकि अब मिट्टी में नमी मौजूद रहने की वजह से इन पौधों व अंगूर की नमी की आवश्यकता पूरी हो जाती हैं।''

इन सुरंगों पर आने वाला खर्च व उससे होने वाले लाभों के विषय में बात करने पर गोविन्द भट्ट कहते हैं– हमने एक सुरंग पर एक पम्पसेट के मूल्य के बराबर खर्च किया है। टैंक पर थोड़ा अधिक खर्च आता है। लेकिन हम कह सकते हैं कि आवर्ती खर्च न के बराबर है। सभी 5–6 टैंकों के रख–रखाव के लिए लगभग 40–50 श्रम दिवसों की आवश्यकता होती है। सूक्ष्म सिंचाई में बहुत अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं होती है। सिर्फ देख–भाल करने के लिए एक चक्कर घूम कर देखना, गेट वाल्व खोलना व बन्द करना ही पर्याप्त होता है।

भट्ट की भविष्य में एक या दो अधिक भू–खण्डों में खेती का विस्तार करने की योजना है, लेकिन नारियल व सुपारी के वर्तमान में मिल रहे दामों की वजह से इसमें बड़ा निवेश करने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहे हैं। ऐसी स्थिति में गोविन्द भट्ट दो पहलुओं पर अध्ययन कर रहे हैं, पहला तो यह कि क्या सुपारी के बगीचे के साथ ही फूलों की खेती संभव है? दूसरी तरफ एक पूरा परिवार और 2.5 एकड़ की खेती सभी एक अनोखे सुरंग के माध्यम से बिना किसी ईंधन के प्रयोग के चल रहा है, जो बहुत से शोधकर्ताओं, जल पर काम करने वाले और बाहर के अत्यन्त इच्छुक लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। गोविन्द भट्ट आशान्वित हैं कि ''हमारी योजना दो कमरों के निर्माण की है, जहां हम अपने पारम्परिक खाद्य पदार्थों को लाकर रखें व लोगों को इस बात के लिए उत्प्रेरित करें कि वे अनोखी खुदाई की इस कला व इसके स्थाई प्रयोग को देखें व समझें।''

बात यहीं पर खत्म नहीं होती है। अच्युत भट्ट के अलावा अन्य दूसरे पुराने किसान अपने दो एकड़ के सुपारी के बगीचे की सिंचाई सुरंग के माध्यम से करते हैं। भट्ट के खेत के आस–पास लगभग दो किमी0 के परिक्षेत्र में किसान व कृषिगत मजदूरों के 18 परिवार निवास करते हैं। एक साथ रहते हुए इन सभी परिवारों के पास कुल 50 सुरंग होंगे। इस प्रकार इन सुरंगों व उससे सिंचाई का विस्तार हो रहा है।

■

पोस्ट- बानी नगर, बाया : पेरला,
जिला कसारगाड़, केरला-671552
ईमेल : shreepadre@gmail.com

Managing water for sustainable farming
LEISA INDIA, Vol. 12, No.3, Pg. # 34-36 ,September 2010

पशुपालन और पारिस्थितिकी खेती

रत्नागिरी के किसानों की प्राथमिकता

नित्या सम्बामूर्ति घाटगे

रत्नागिरी के युवा किसानों ने पशुपालन के साथ एकीकृत लघु स्तरीय खेती के माध्यम से क्षेत्र में अनोखी विविधता को सफलतापूर्वक संरक्षित किया है। स्थाई खेती के दीर्घकालिक लाभों को देखते हुए ये युवा किसान स्थाई खेती गतिविधियों को भी अन्य क्षेत्रों में प्रसारित करने का कार्य कर रहे हैं।

वर्ष 1980 में प्रारम्भ हुए जल संभरण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इस क्षेत्र में सबसे पहला काम 6 गांवों में विभिन्न माध्यमों से जल संभरण किया गया। सबसे पहले यह सुनिश्चित किया गया कि साल के बारहों महीने पानी की उपलब्धता रहे और इसके लिए छोटे चेकडैम बनाये गये, भूमि और मृदा को पुनर्जीवित करने के लिए पक्की सड़कों के दोनों तरफ वृक्षारोपण किया गया, जिससे एक बार पुनः हरियाली दिखने लगी। साथ ही एक उद्देश्य यह भी था कि इससे लोगों की आर्थिक आमदनी भी बढ़े। इसके लिए लोगों ने आम और लीची लगाना आरम्भ कर दिया। छोटे पौधों और नर्सरियों की सुरक्षा के लिए लोगों ने बकरियों को या तो मार दिया अथवा उन्हें दूर खदेड़ दिया था और इस कारण खेती व पशुपालन की स्थानीय पद्धति में अवरोध उत्पन्न हो गया था।

विकास और प्रगति को अक्सर अकेले आर्थिक संदर्भ में मापा जाता है। यही कारण है कि विभिन्न विकास कार्यक्रमों के सामाजिक और आर्थिक कुप्रभाव कुछ समय बाद स्वयं ही परिलक्षित होने लगते हैं। उपरोक्त संदर्भो से यह एक छोटी सी कहानी है कि कैसे इस क्षेत्र के युवा लोगों के समूह ने अन्थरा के साथ मिलकर वैश्विक परिवर्तन के इस कठिन दौर में छोटे पैमाने पर कृषि और पशुधन उत्पादन के साथ अपने क्षेत्र की विशिश्टता बनाये रखने की कोशिश की है।

विलये जल संभरण इस क्षेत्र में एक अच्छी तरह से जाना जाने वाला जल संभरण है। वर्ष 1990 में कोंकण में जब पानी उपलब्ध था, तो बहुत से लोगों ने एक सफल डेयरी कार्यक्रम चलाने की महत्वाकांक्षा पाली। वास्तव में, एक स्थानीय मंत्री ने डेयरी चलाने के लिए अच्छी–खासी धनराशि आवंटित करा ली थी, परन्तु दुर्भाग्य से कोई भी गांव वासी पहल करने के लिए तैयार नहीं था। इसका कारण यह था कि अधिकांशतः पुरूष आजीविका की तलाश में घर से दूर मुम्बई पलायन कर गये थे और खेती सम्बन्धित सभी जिम्मेदारियां महिलाओं के ऊपर आ गयी थीं। बढ़ते कार्य बोझ के साथ, वे दलहन व अनाज की निश्चित प्रजातियों की खेती भी कर रही थी, क्योंकि इसे वे आसानी से बाहर से आये पैसों से खरीद पा रही थीं। दुग्ध व्यवसाय का मतलब अधिक देख–रेख, अधिक चारा, अधिक पानी और अधिक कार्य था और महिलाएं अकेले इसे वास्तव में नही संभाल पातीं। अतः दुग्ध व्यवसाय का कार्यक्रम चुपचाप वापस ले लिया गया।

स्थानीय मानव संसाधन तैयार करना

ठीक उसी समय, अन्थरा द्वारा क्षेत्र से 10 नौजवानों को पशु स्वास्थ्य कर्मी के तौर पर प्रशिक्षित किया गया। अन्थरा द्वारा दिये गये इस प्रशिक्षण में मुख्य जोर स्थानीय नस्लों व प्रजातियों, स्थानीय स्तर पर उपलब्ध चारा और विशेषतः स्थानीय स्तर पर उपलब्ध वानस्पतिक दवाइयों पर था। इन पशु स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा कृषि और पशु उत्पादन के स्थानीय तंत्र को अभिलेखित करना व परखा जाना था, इससे उनके अन्दर स्वयं की जानकारी व तंत्र का विकास तथा उनके आत्मविश्वास में वृद्धि होगी। इस तरीके से खेती के एक नये पद्धति का प्रारम्भ हुआ, जहां ये युवा लोग त्वरित आर्थिक लाभ से आगे जाकर कार्य करना चाहते थे। ग्राम समुदाय हालांकि युवा लोगों के इस पहल को स्वीकारने में हिचक रहा था और इसीलिए इसकी शुरूआत धीमी हुई।

इस दौरान कई घटनाओं जैसे गांव में मुर्गियों में चेचक तथा सेलमोनेलोसिस जैसी बीमारियों (जिससे गांव के लोगों की मुर्गियां बड़े पैमाने पर मर जाती थीं) के रोकथाम में पशु स्वास्थ्य कर्मियों की भूमिका को देखकर गांव वालों ने इनके मूल्य को पहचाना। इन पशु स्वास्थ्य कर्मियों ने वानस्पतिक दवाओं से आपदा का प्रतिउत्तर दिया तथा अगले ऋतु में इस तरह की बीमारियां न हो पायें, इसके लिए नियमित तौर पर टीकाकरण कार्यक्रम भी चलाये। इन्होंने स्थानीय पशु अस्पताल विभागों को इस बात के लिए भी तैयार किया कि वे बड़े पशुओं का भी टीकाकरण आवश्यक रूप से करायें। जब कोई पशु बीमार पड़ जाता था और उन्हें बुलाया जाता था तो वे तुरन्त जाते थे, अपनी वानस्पतिक दवाओं सम्बन्धी जानकारियों को लोगों से बांटते थे। यदि वे देखते थे कि हालत बहुत गम्भीर है, तो तुरन्त पशु अस्पताल ले जाने की सलाह भी देते थे। नतीजतन स्थिति यह

हो गयी कि यहां तक कि समुदाय को यह भी विश्वास था कि मादा पशु में गिरते मातृत्व दर को भी ये पशु स्वास्थ्य कर्मी सुधार सकते हैं।

हालांकि यह जल्द ही स्पष्ट हो गया कि क्षेत्र में पशुओं के विकास की हद सीमित होने के कारण एक आर्थिक गतिविधि के तौर पर दुग्ध उत्पादन उद्योग नहीं संभव है, क्योंकि यहां पर गुणवत्ता पूर्ण चारे की बहुत बड़ी समस्या है। बकरियाँ तो जल संभरण विकास कार्यक्रम के साथ ही खत्म हो चुकी थीं और समुदाय भी उन्हें वापस लाने का इच्छुक नहीं था। इस क्षेत्र के लिए केवल पुनः मुर्गी पालन करना ही उपयुक्त व स्वीकार्य लग रहा था और पशु स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं को भी इस तरीके से तैयार किया गया था कि वे सभी पक्षियों को स्वस्थ रख सकते थे। उन्हें समय पर टीका लगवाना, दाना–पानी की समय से व समुचित व्यवस्था करना तथा बीमार पड़ने पर उन्हें तुरन्त देख–भाल उपलब्ध कराना, इनके कार्य में शामिल था।

प्रथमतः कृषि

पशु स्वास्थ्यकर्मी कृषि से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों की खोज में अभिरूचि रखते थे। आम विशेषकर अलफान्जो आम इस क्षेत्र तथा किसानों की प्रमुख नगदी फसल है। यहां तक कि छोटे किसान भी अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए आम के वृक्षों का रोपण प्रारम्भ कर दिये थे और इससे अपेक्षाकृत अधिक लाभ की प्राप्ति के लिए फलों को बचाने हेतु विभिन्न प्रकार के रसायन विशेषकर हारमोन्स और कीटाणुनाशक का छिड़काव कर रहे थे। इन रसायनों के प्रभाव से अपरिचित ये किसान दिसम्बर के महीने में बहुत बड़ी मात्रा में छिड़काव करते थे, जिससे क्षेत्र के गांव जहां इनका छिड़काव किया जाता था, रसायनिक धुंध से ग्रसित हो जाते थे।

अब तक जानवरों के लिए हर्बल दवाओं की वैधता के प्रति आश्वस्त पशु स्वास्थ्य कर्मी फसल किस्मों पर हर्बल दवाओं के साथ प्रयोग करने के लिए उत्सुक थे। एक छोटे प्रयोग के तौर पर उन्होंने शीत ऋतु में विभिन्न प्रकार के संयोजन का उपयोग किया, जिससे उनको बड़ी सफलता प्राप्त हुई। स्थानीय स्तर पर प्राप्त औषधीय पौधों जैसे – वाइटेक्स, आदि को विभिन्न अनुपातों में लेकर उसमें गाय का मूत्र मिलाकर एक प्रभावी रसायन तैयार कर उसका छिड़काव किया गया, जो निस्सन्देह घातक नहीं था और सफल भी हुआ। इस सफलता से प्रेरित होकर पशु स्वास्थ्य कर्मियों ने नियमित तौर पर इन जैव कीटनाशकों को तैयार करना व क्षेत्र में लोगों के प्रयोग के लिए बेचना प्रारम्भ कर दिया। विभिन्न कम्पनियों द्वारा किसानों को बेची जाने वाली कीटनाशकों के मुकाबले इसका मूल्य भी यथोचित था।

कुछ समूह अपने कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करना प्रारम्भ कर दिये थे और प्रयोग स्तर पर वर्मी कम्पोस्ट की कुछ इकाईयां उन्होंने लगायीं। शुरूआत में अन्थरा द्वारा वर्ष 2002 में जी0ई0एफ0 परियोजना के तहत् लघु अनुदान के साथ रत्नागिरी जिले के तरवाल गांव में एक वर्मी कम्पोस्ट इकाई को लघु स्तरीय जैविक विविधता पार्क के रूप में प्रारम्भ किया गया। उस इकाई का प्रतिफल बहुत अच्छा रहा, क्योंकि उस समूह ने जल्दी ही यह समझ लिया कि अन्य पशुओं की तरह ही केंचुओं को भी देख–भाल की आवश्यकता होती है। जल्द ही यह कार्यक्रम क्षेत्र के अन्य गांवों में बड़ी तेजी से फैलने लगा। 2005–2006 में उस समूह ने जल स्वराज योजना की स्थानीय इकाई से सम्पर्क किया और वे किसानों के समूहों को वर्मी कम्पोट बनाने का प्रशिक्षण देने लगे तथा दूसरी ओर जिले के 40 से अधिक गांवों में घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन का कार्य प्रारम्भ हो गया।

स्थानीय खाद्य का पुनर्उपयोग

2005 में अहमदाबाद भारतीय प्रबन्धन संस्थान के कुछ छात्रों ने इस क्षेत्र का भ्रमण किया और उन लोगों ने क्षेत्र में खाद्य एवं पशुचारे की सुरक्षा के लिए लघु सम्परीक्षण के आधार पर एक प्रयास प्रारम्भ किया। यह पाया गया कि हालांकि गांव बड़ी मात्रा में आम तथा काजू का निर्यात कर रहा है, परन्तु उस आय से गांव के सामान्य किसानों की पौष्टिकता नहीं सुधर रही है। अन्य में ताज़ी सब्ज़ियां मुख्य रूप से स्थानीय पौष्टिकता तंत्र की कमी को दूर करने का एक प्रमुख साधन हैं, जबकि वहां के लोग स्थानीय प्रकार की हरी सब्ज़ियों की खेती करना छोड़ दिये हैं और सामान्यतः यहां के लोग बेलगांव और पोल्हापुर से आयातित सब्जियों पर निर्भर हैं। ये आयातित सब्ज़ियां न केवल महंगी होती हैं, वरन् दूर से आने के कारण उनकी गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। इसलिए स्थानीय खाद्य पदार्थों को पुनः लाने और उनके स्थानीय उत्पादन में अभिवृद्धि उस क्षेत्र में एक नयी चुनौती के रूप में उभरी, जिसमें स्थानीय बीजों को प्राप्त करना बहुत बड़ी चुनौती थी। निजी कम्पनियाँ रंग–बिरंगे पैकेजों में अपने बीजों को बेच रही हैं और किसान अपने बीज को अगली फसल के लिए संरक्षित रखने के बजाय बीज के पैकेट को दुकान से खरीदकर उसे बोना अधिक आसान समझने लगे थे। पशु स्वास्थ्य कर्मी ने विभिन्न प्रजातियों की स्थानीय बीजों को क्रमबद्ध ढंग से एकत्रित करने की प्रक्रिया प्रारम्भ की तथा उन्हें रखने के लिए स्थानीय बीजों की संरक्षण पद्धति को भी अभिलेखित किया।

कृषि एवं पशुपालन तंत्र का समन्वय

चावल तथा स्थानीय अनाजों के उत्पादन की अभिवृद्धि के लिए विभिन्न विधियों का मूल्यांकन किया गया। देश के अन्य भागों में स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से श्री विधि पहले से ही बहुत लोकप्रिय थी। उसका एक परिष्कृत रूप जो जापानी विधि के नाम से विख्यात था, स्थानीय कुछ किसानों द्वारा अभ्यास में लाया जा रहा था। श्री विधि यद्यपि कि मृदा में उर्वरक के परिप्रेक्ष्य में अपेक्षाकृत अधिक विनियोग चाहता है। इस समूह द्वारा यह अध्ययन करने के साथ ही अन्य कम्पोस्टिंग की विधि तथा जैविक अभिवृद्धि की तैयारी व उसको विकसित करने के लिए विशेषकर पंचगव्य और अन्य विधियाँ जो कि पशुओं के उत्पाद विशेषकर गायों के मल–मूत्र से बनाई जा रही थीं, उसे विकसित करने का अध्ययन प्रारम्भ किया। इसी क्रम में बकरी तथा भैंसों के मूत्र पर भी प्रयोग इस प्रकार किया गया कि क्या इनका भी प्रभाव उसी प्रकार का है। कृषि में पशुओं की महत्ता उभर कर आयी। इस क्षेत्र में पशु खाद की बहुत ही कमी महसूस की गयी। क्योंकि यहां के लोगों ने अपने पशुओं को विशेषकर स्थानीय पशुओं को बेच दिया था। इस क्षेत्र में प्राप्त किये गये चावल के खेतों पर किये गये अध्ययन से ज्ञात हुआ कि पशु जनित खाद व सांड़ रसायनिक खाद व मशीनों का विकल्प हो सकतें हैं।

धीरे–धीरे इस क्षेत्र में पशु व कृषि के समन्वयन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई, जिसमें स्थानीय बीज, फसल, पशु उत्पाद, औषधीय पौधों तथा झाड़ियों का सहयोग लिया गया। इनका अभिलेखन बहुत सावधानी

शेष भाग पृष्ठ 14 पर...

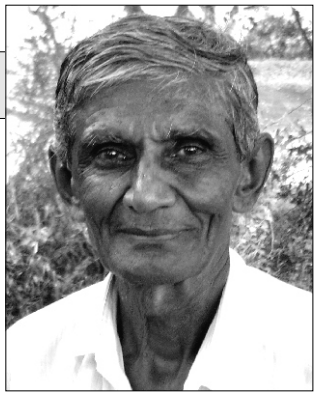

खेती में युवा

एल० नारायण रेड्डी

वैश्वीकरण एवं विश्व व्यापार संगठन का सबसे बड़ा व मुख्य परिणाम यह हुआ कि हमारे देश के युवाओं का मोह खेती से घटता गया और वे अधिक से अधिक धन कमाने के लिए शहरों की तरफ जाने लगे। गांव गरीब से गरीबतर होते गये और सिर्फ पुराने लोग ही खेती के कार्यों में संलग्न रहे। पिछले दो वर्षों में खाद्य सामग्रियों मसलन अनाज, दालें, तेल और सब्ज़ियों आदि के दाम महीने दर महीने बढ़ रहे हैं। चीन, जो कि जनसंख्या वृद्धि में पहला स्थान रखता है और विश्व में द्वितीय उच्च आर्थिक वृद्धि दर वाला देश है, उसे आने वाले दिनों में अधिक मात्रा में खाद्य एवं अन्य सामग्रियों की आवश्यकता हो सकती है, जिसे भारत जैसे देश के लिए अपनी जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने हेतु अधिक मूल्य चुकाकर खरीदना पड़ सकता है। अतः यह अति आवश्यक है कि सरकार और जनता दोनों ही कृषि उत्पादन को वरीयता के आधार पर सर्वाधिक महत्व दें। लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि अधिक कृषि उत्पादन लेने के लिए बाहरी निवेश में वृद्धि की जाये। किसी भी देश, विशेषकर भारत के लिए कम निवेश में कृषिगत उत्पाद उगाने, स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों, फसल अवशषों तथा मानव शक्ति का उपयोग अधिक क्षमता व स्थाईत्व के साथ करने हेतु पारिवारिक खेती एक बेहतर माध्यम हो सकती है।

हम सभी यह सोचते हैं कि उद्योगों के तौर पर स्थापित खेती से हमें कम पैसे में भोजन सामग्री की उपलब्धता हो सकती है। पर वास्तव में, आद्योगिक खेती में किये गये बाहरी निवेश में जीवाश्म ईंधन की खपत अधिक होती है। ऐसे में इस तथ्य पर विचार करना आवश्यक है कि जीवाश्म ईधन बहुत दुर्लभ है तथा बहुत जल्दी उपलब्ध भी नहीं हो सकता है।

इसके साथ ही एक बात यह भी है कि लम्बी दूरी के परिवहन के कारण बाहरी निवेश वैश्विक तापमान वृद्धि का कारण भी बन रहा है। अतः युवा पीढ़ी को अधिक मजदूरी के लिए शहरों में जाने से पहले दो बार सोचना चाहिए। यदि खेती की एकीकृत पद्धति जैसे वृक्षारोपण, पशुपालन, कृषि वानिकी और अनाज उत्पादन को एक साथ अपनाया जाये, जो स्व निर्भर व स्व सहायतित हों, तो खेती आर्थिक तौर पर अनुकूल एवं स्थाई हो सकती है। क्योंकि ''हरित क्रान्ति'' तकनीक के कारण जीवाश्मों के नुकसान की वजह से भूमि की गुणवत्ता अवनत हुई, जिसके परिणामस्वरूप मृदा की नमी संरक्षण क्षमता में गिरावट आई और मृदा जीवाणु तथा मृदा पुनर्जीवन की प्रक्रिया विनष्ट हुई परिणामतः कृषि रसायनों की मांग अधिकाधिक हो गयी। पंजाब और हरियाणा बाहरी निवेश के कारण विनष्ट हुई खेती के ज्वलन्त उदाहरण हैं। सौभाग्य से, कुछ युवा खेती में जा रहे हैं, लेकिन उनके लिये यह जानना अधिक महत्वपूर्ण होगा कि बाह्य लागत से मुक्त कराने हेतु लघु स्तर की अथवा पारिवारिक खेती अधिक महत्वपूर्ण होती है और इससे वर्ष दर वर्ष मृदा अधिक उत्पादक होती जाती है। केवल आर्थिक लाभों के आधार पर कृषि की तुलना अन्य व्यवसायों से नहीं की जानी चाहिए। यह एक उत्कृष्ट पेशा है, जहां पर प्रकृति के अतिरिक्त अन्य किसी के अधीन नहीं रहना पड़ता है। अपने अनुभवों के आधार पर मैं युवाओं को यह सुझाव देना चाहूंगा कि वे खेती शुरू करने से पहले सफल किसानों के यहां अधिक से अधिक भ्रमण करें और हो सके तो उनके साथ काम भी करें।

शुरूआत में कम से कम दो साल तक धीरे–धीरे काम करते हुए खेती के विभिन्न पहुलओं पर अपनी समझ बढ़ाते हुए गतिविधियों में विश्वास हासिल करना चाहिए। उन्हें अपनी खेती और प्रकृति से प्यार करना चाहिए व साधारण जीवनशैली अपनानी चाहिए। वैसे तो किसी भी पेशे के लिए समर्पण व भागीदारी आवश्यक होती है, परन्तु विशेषकर खेती के लिए यह दोनों बहुत ही आवश्यक हैं। सहायक पेशे जैसे – मधुमक्खी पालन, जलीय कृषि, मत्स्य पालन, नर्सरी, मुर्गी पालन, बकरी पालन, भेड़ पालन, दुग्ध उत्पादन, सूकर पालन आदि अर्थव्यवस्था में योगदान दे सकते हैं और इनके सफल क्रियान्वयन में कृषिगत उप उत्पादों का प्रयोग किया जा सकता है।

युवा वर्ग को अपने उत्पादों की मूल्य अभिवृद्धि हेतु प्रत्यक्ष तौर पर उपभोक्ताओं से सम्बन्ध बनाना चाहिए। जाली व प्लास्टिक शीट के छाये में सब्ज़ियों की खेती करने से विषम मौसम में भी अच्छी गुणवत्ता वाली सब्ज़ियां उत्पादित कर उनसे बेहतर लाभ लिया जा सकता है। खेती कर्ज और तनाव से मुक्त एक स्व स्थाई पेशा होना चाहिए। बेहतर आर्थिक लाभ के साथ स्थाई खेती के लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि घर के बीज एवं खुद बनाये गये खाद का प्रयोग किया जाये एवं परिवार का श्रम खेत में लगे।

श्री नारायण रेड्डी एक महान जैविक किसान हैं और ऐसे सन्दर्भ व्यक्तियों में से एक हैं, जिनकी सर्वाधिक मांग पारिस्थितिकी खेती पर जानकारी प्रदान करने हेतु होती है।

■

श्री निवासपुरा, वाया मारेलानाहाली
हनाबे पोस्ट–561203, डोडाबल्लापुर तालुक,
बंगलौर देहात, कर्नाटक, भारत

Youth in farming
LEISA INDIA, Vol. 13, No.1, Pg. # 31, March 2011

पारम्परिक सामाजिक संस्थाओं से मिली सीख

एस०टी०एस० रेड्डी, एन०वी० हीरेमथ, राजा मुहम्मद और अशोक अलूर

मुडियानुर तालाब का पारम्परिक प्रबन्धन सभी परिवारों की खेती के लिए पानी के समान वितरण की सुनिश्तिता, समाज में विभिन्न भूमिकाओं के सम्मान को प्रोत्साहन देने एवं अलग–अलग पार्टियों के बीच विवाद के समाधान को संभव बनाते हुए प्रबन्धन तंत्र का एक दिलचस्प उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह पाया गया है कि इस तरह की गतिविधियाँ केवल गांव वालों की सिंचाई की आवश्यकता को पूरी करने के स्तर पर ही प्रभावी नहीं होतीं, वरन् इनके माध्यम से भू–जल संरक्षण भी किया जा सकता है। उन लोगों के साथ अधिक सीखा जा सकता है, जिन लोगों ने आज समुदाय आधारित टैंक प्रबन्धन के अधिक प्रभावी व टिकाऊ प्रणाली को बनाया है।

फोटो : एस. जयराज

समुदाय द्वारा समूह चर्चा

भू–गर्भ जल को पुनः संभरण करने व दूर–दराज के इलाकों में बसने वाले परिवारों के लिए स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने की दृष्टि से दक्षिणी भारत के तालाब अधिक क्षमतावान रहे हैं, लेकिन विगत कुछ दशकों में राज्य सरकारों द्वारा बड़ी–बड़ी सिंचाई परियोजनाओं, कुंओं द्वारा सिंचाई तालाबों से पानी को ऊपर लाने की आधुनिक तकनीकों पर जोर दिये जाने तथा लघु सिंचाई विभाग को तालाबों, पोखरों आदि का रख–रखाव सौंपे जाने, तालाबों के रख–रखाव हेतु समुदाय द्वारा बनाये गये पुराने सामाजिक संस्थानों के अधिकारों को इन विभागों को हस्तान्तरिक किये जाने आदि के वजह से ये तालाब अपना अस्तित्व खो रहे हैं।

ऊपर गिनाये गये सभी कारणों के बावजूद, यहाँ पर कुछ तालाबों जैसे मुलबगल तालुक के अन्तर्गत अवस्थित मुड़ियानुर तालाब की केस स्टडी को दस्तावेजित कर बनाया जा रहा है, जो सिंचाई के एक स्रोत के तौर पर समिति द्वारा प्रभावी ढंग से प्रबन्धित किया जा रहा है। मुड़ियानुर तालाब कर्नाटक के कोलार जिले के तालुक मुलबगल में तालाबों की श्रृंखला का एक भाग है जो सात अन्य गाँवों के लिए सिंचाई के उद्देश्य को पूरा करता है। मुड़ियानुर तालाब से आच्छादित क्षेत्रफल लगभग 993 हेक्टेयर है।

सिंचाई प्रणाली

मुडियानुर के दूरस्थ गांवों में कुछ इस तरह का ढांचा है कि तालाब से पानी की प्रत्येक बूंद संरक्षित होती है। यह ढांचा इस तरह तैयार किया गया है कि नहर व नाले के माध्यम से जल वितरण तक सबकी पहुंच बन जाये। जल का वितरण दो फाटकों के रास्ते किया जाता है जो कि तालाब के दूसरी तरफ स्थित है। फाटक से निकल कर नहर का विस्तार सभी दूरस्थ क्षेत्रों तक हुआ है और इसका नाम है– राजा कालयुव। इस नहर से समतल व लम्बवत् दोनों तरीके से पानी वितरित होता है अर्थात् कमाण्ड क्षेत्र के सबसे निचले स्थान से लेकर ऊंची पहाड़ी तक खेतों से पानी / जल निकासी एवं एकत्रीकरण तथा दूसरी ओर सिंचाई के लिए पानी पहुंचाने की व्यवस्था होती है। दूरस्थ क्षेत्रों में नहरों के अच्छे संजाल के कारण यहां पर फसलों की खेती भी बेहद नियोजित ढंग से होती है। तालाब के एक न्यून वर्षा वाले क्षेत्र में अवस्थित होने के कारण कैच क्राप (दो फसलों के बीच में कम अवधि की फसल) इस बात का नियोजन करने की अनुमति देता है कि मानसून सीजन में यह अपनी क्षमता के अनुसार भरपूर पानी संग्रह कर लेता है। यह कैच क्राप आंशिक रूप से सिंचित होती है और एक अथवा डेढ माह में हो भी जाती है। यदि तालाब में पानी भरपूर है तो केवल गर्मी के दिनों में धान की सिंचाई के साथ ही कैच क्राप की सिंचाई हो जाती है।

अनौपचारिक लेकिन मान्य सामाजिक संस्थान

लगभग 828 ईसवीं के आस–पास बना मुडियानुर तालाब जोड़ीदार की एक खास सम्पत्ति है। मुडियानुर गांव में स्थित यह तालाब ब्रिटिश काल के दौरान उस समय बनाया गया था, जब गांव में जमींदारी प्रथा थी और उन्हीं के द्वारा राजस्व एकत्र होता था। 56 परिवार इस जोड़ीदार व्यवस्था से जुड़े हुए थे और प्रत्येक परिवार जो गांव में भी मुख्य था यहां पर भी प्रधान था और उसे पटेल का नाम दिया गया। जोड़ीदार की खास सम्पत्ति के तौर पर, इस तालाब के माध्यम से पूरे दूरस्थ क्षेत्र को आच्छादित किया गया है। आस–पास के अन्य गांवों के लोग भी यहां से पानी किराये पर लेते हैं। 1951 में जोड़ीदार व्यवस्था उन्मूलन होने के बाद पिछले दशक के 1970 में ऊसर भूमि सुधार और वर्ष 1976 में इनमथाई व्यवस्था में जोड़ीदार ने मुड़ियानुर व आस–पास के अन्य गांवों के किसानों को दूरस्थ क्षेत्रों में स्थित अपने कब्जे की जमीन को बेचना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि आज, दूरस्थ क्षेत्रों में लगभग 40 प्रतिशत भूमि पर आसामियों द्वारा खेती की जाती है। पानी प्रयोग में पर्याप्त उपलब्धि के लिए मुडियानुर तालाब के अधिकृत क्षेत्र में रहने वाले किसानों ने एक अनौपचारिक संस्थान के निर्णय को सम्मान दिया। इस अनौपचारिक संस्थान का गठन सभी 7 गांवों की पुरानी समिति के लोगों को मिलाकर किया गया है। ये तालाब व पानी प्रबन्धन दोनों पर अपना निर्णय देते हैं। समिति का ढांचा द्वि–स्तरीय है। प्रथम स्तर में प्रत्येक गांव में निवास करने वाली सभी जातियों का प्रतिनिधित्व रहता है और यह गांव

स्तरीय प्रतिनिधि मिलकर द्वितीय स्तर का निर्माण करते हैं। प्रथम स्तर पर समिति का गठन गांव में रहने वाले प्रत्येक जातियों के आमन्त्रित प्रतिनिधि के द्वारा गांव स्तर पर होता है। सामान्यतः यह प्रतिनिधित्व बड़े समूह से भी होगा और उसके अधिकार क्षेत्र में अधिक खेती भी होगी।

परम्परागत रूप से बुद्धिजीवियों की इस समिति का नेतृत्व मुड़ियानुर के एक जोड़ीदार द्वारा किया जाता था। सामान्यतः यह पटेल होता था, जो मन्दिर के लिए गठित बुद्धिजीवी समिति का मुखिया होता था। जब वर्ष 1976 में पटेल का पद समाप्त हो गया, उस समय अन्तिम पटेल के पुत्र को इस समिति के मुखिया के रूप में स्वीकार किया गया। इस निरन्तरता को चुनौती नहीं दी गयी थी तथापि अचानक से कोई क्षमतावान व्यक्ति आ जाये तो लोगों को वह मान्य था। यद्यपि इस आकस्मिक व्यक्ति को बैठकों में आधिकारिक तौर पर आमन्त्रित नहीं किया जाता था। वह सिर्फ मन्दिर व तालाब से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों से सम्बद्ध था। गांव स्तरीय कार्यकर्ताओं के सन्दर्भ में, कार्यालय का मुखिया आपसी समझ के आधार पर प्रत्येक वर्ष बदलाव के आधार पर हरिजन परिवारों तक पहुचेगा। इन गांव स्तरीय कार्यकर्ताओं में थूटी (गांव चौकीदार) नीरगण्टी (पानी छोड़ने और संदेश प्रसारित करने के लिए अधिकृत व्यक्ति) और तलवारा (वास्तव में ग्राम प्रधान / गांव मुखिया का व्यक्तिगत सहयोगी) शामिल थे। मुड़ियानुर गांव में चार हरिजन परिवार थे और चारों प्रत्येक वर्ष विभिन्न भूमिकाएं लेते हैं। मुड़ियानुर तालाब के लिए नीरगण्टी बनने व इनाम भूमि (यद्यपि कि यह नीरगण्टी के रूप में अपने कार्य प्रदर्शन पर निर्भर करता है) पर दावा करने का अधिकार केवल इन्हीं चार परिवारों के पास है। अन्य किसी गांव के किसी परिवारों के पास नीरगण्टी बनने का अधिकार नहीं है।

सिंचाई के लिए पानी निस्तारण, पानी के प्रभावी आपूर्ति के लिए उपकरणों की मरम्मत की आवश्यकता के ऊपर अधिकांश निर्णय होते हैं। पानी के उपकरण प्रबन्धन के साथ निर्णय व्यवहार की सुव्यवस्थित पद्धति के द्वारा विस्तृत रूप से निर्देशित होती है। कोई भी इस पद्धति की उत्पत्ति के बारे में जागरूक नहीं है, लेकिन तालाब से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति इसके अभ्यास के बारे में बेहतर ढंग से समझ रखता है। पद्धति के बारे में किसी भी प्रकार की भूल एक जोखिमपूर्ण तथ्य है और सामान्यतः इससे बचा जाता है।

जल प्रबन्धन

बुद्धिजीवियों की समिति पानी निस्तारण के स्थापित तरीके का अनुसरण करती है और प्रत्येक सत्र में इसका प्रयोग भी किया जाता है। वैसे बरसात के मौसम के दौरान तालाब में अपेक्षा से अधिक पानी एकत्र होने के कारण किसी भी किसान को खेतों में पानी भरने व नर्सरी तैयार करने हेतु पानी निकालने की अनुमति नहीं थी। मागे वर्षा (जल्दी गर्मी) के कारण सिंचाई के उद्देश्य से पानी नहीं दिया जाता है क्योंकि इस समय फसल फूटने की अवस्था में होती है और सिंचाई से निश्चित तौर पर उत्पादन में इजाफा होता है। दिसम्बर के प्रथम व आखिरी सप्ताह में बुद्धिजीवियों की समिति की परामर्श बैठक के बाद ही सिंचाई के लिए पानी दिया जाता है। पर्याप्त मात्रा का निरूपण करने के लिए कुछ सूचक होते हैं, जो वर्षों के अनुभवों से प्रमाणित होते हैं। इन सूचकों के अनुसार, पानी की गहराई नापने के लिए पत्थर के खम्भों पर लगे सबसे ऊंचे निशान के पार तक यदि पानी है, तो धान की फसल उगाने के लिए पर्याप्त पानी है। यदि पानी निश्चित सीमा से कम है तो फसल नहीं हो सकती और सिंचाई के लिए पानी नहीं दिया जाएगा। यदि पानी तालाब की ऊपरी सीमा से कुछ फीट ही कम है, तो ऐसी स्थिति में नीरगण्टी की राय मानी जायेगी। यदि नीरगण्टी यह विश्वास व्यक्त करता है कि यह पानी फसल उगाने के लिए पर्याप्त है तब समिति सिंचाई हेतु पानी देने का निर्णय करती है। इन निरूपणों पर ही पानी छोड़ने की तिथि निर्धारित की जाती है। सामान्यतः नीरगण्टी ही समिति को निश्चित तिथि की राय देता है। नीरगण्टी की यह सलाह आवश्यक भी होती है क्योंकि पानी छोड़ने से पहले नहर की मरम्मत एवं प्रबंधन किया जाता है।

जल उपयोग के परिणाम

किसान मुख्यतः खरीफ मौसम में धान की पारम्परिक प्रजातियों के बीजों को दूसरे क्षेत्रों से खरीद कर बाहर से आयी बीजों को उगाते हैं। मध्य जून में जब कि मानसून आ जाता है उस समय या तो धान की सीधी बुवाई कर दी जाती है अथवा बीजों की नर्सरी डाल देते हैं। कीचड़ युक्त चिकनी उपजाऊ मिट्टी में नमी अधिक रहती है। तालाब के फाटक निराई के समय तक अर्थात जुलाई अन्त तक नहीं खोले जाते हैं। इससे तालाब का लगभग 30 प्रतिशत पानी सुरक्षित रहता है। पिछले 15 वर्षो पहले यदि जून से पहले ही तालाब ओवरफ्लो हो जाता था अथवा यह अपने आखिरी स्तर तक पहुंच जाता था तो किसान पौधों (नर्सरी) की रोपाई कर सकते थे। समय बीतने के साथ किसानों को यह अनुभव हुआ कि अब जून में तालाब में पूरा पानी नहीं भरता है। अतः उन्होंने सीधी बुवाई पुनः प्रारम्भ कर दी जो कि पानी संकट की स्थिति के लिए बेहतर उपाय था। यद्यपि अन्य फसलों की बुवाई खरीफ ऋतु में नहीं हो पा रही थी क्योंकि वर्षा के मौसम में यदि अधिक बारिश अचानक हो गयी तो चिकनी मिट्टी जल जमाव युक्त हो जाती थी।

गर्मियों में किसानों की व्यक्तिगत प्राथमिकता के आधार पर प्रजातियों के उगाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। तथापि छोटी अवधि की प्रजातियों को वरीयता दी जाती है ताकि ऋतु के अन्त में होने वाले पानी के संकट का बहुत असर फसल पर न पड़े साथ ही छुट्टा पशुओं से नुकसान भी न हो, क्योंकि उस दौरान बहुत से खेत खाली रहते हैं।

अभी हाल में, किसानों ने अनुभव करना प्रारम्भ किया कि रबी ऋतु में धान उगाने के लिए पानी कम पड़ जा रहा है, जबकि दिसम्बर में तालाब में पानी लबालब भरा रहता है। तद्नुसार किसानों के हित को देखते हुए पिछले वर्ष बुद्धिजीवियों की समिति इस नतीजे पर पहुंची कि अधिकृत क्षेत्र के केवल एक हिस्से को सिंचित किया जाये। अर्थात कुल 240 एकड़ में से सिर्फ 80 एकड़ भूमि की सिंचाई की जाये। अधिकृत क्षेत्र को 80 एकड़ के तीन हिस्से में विभाजित किया गया और प्रथम वर्ष में प्रथम वर्ग की सिंचाई गर्मी ऋतु में की गयी थी। दूसरे वर्ष में दूसरा भाग सिंचाई के लिए लिया गया। यहां यह उल्लेख करना अधिक उपयुक्त होगा कि अधिकृत क्षेत्र में रहने वाले सभी किसानों ने इस बदलाव को स्वीकार किया।

ढांचे का रख-रखाव

अधिकृत क्षेत्रों में पानी की आपूर्ति के लिए आधारभूत संसाधन का

फोटो : एस. जयराज

स्थानीय नीरगण्टी के साथ चर्चा

रख–रखाव बुद्धिजीवी समिति द्वारा एक सम्पत्ति के तौर पर किया जाता है, लेकिन शेष संसाधनों जैसे– फाटकों, बांधों और अन्य ढ़ांचों की मान्यता सम्पत्ति के तौर पर नहीं है और न ही समिति इसके रख–रखाव के लिए उत्तरदायी है। इन सम्पत्तियों के रख–रखाव व प्रबन्धन के लिए नीरगन्टी की राय के साथ समिति द्वारा कुछ विकल्प तलाशे जाते हैं। नीरगन्टियों के सुझावों पर आधारित समिति किसानों को सलाह देती है कि वे तालाब ढांचे के रख–रखाव में अपनी भागीदारी निभायें।

आपूर्ति नहर व फाटकों के ढांचों की भी मरम्मत की आवश्यकता होती है। यदि फाटक पत्थर की पटिया के बने हैं, तब तो उनके मरम्मत की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन तालाब में पानी एकत्र होने वाले टैप की वजह से फाटक के चारों तरफ मिट्टी एकत्र हो जाती है, जिसे साफ करने की आवश्यकता होती है। सामान्यतः सम्बन्धित नीरगण्टी द्वारा इसकी सफाई की जायेगी। यदि नहर वहां से निकलती है जहां तली पर पानी एकत्र होता है, तब किसान सोच–विचार कर फाटक से पानी लेने के लिए एक नहर बना लेंगे।

किसान मुख्य नहर पर ध्यान केन्द्रित करते हैं और नियमित रूप से पानी वितरित होता है। यदि नीरगण्टी का बुलावा होता है, तभी किसानों को पानी दिया जाता है। किसानों को दो प्रकार की गतिविधियों के लिए बुलाया जाता है। प्रथम तो प्रत्येक ऋतु में पानी छोड़ने से पहले नहरों से घास की सफाई एवं गाद निकालने के लिए तथा दूसरा बड़े मरम्मतों जैसे नहरों में आई दरार को पाटने अथवा अतिरिक्त भार से खराब हुई नहर बांध की मजबूती में किसानों की भागीदारी सुनिश्चत करने के लिए प्रत्येक सीजन में नियमित रूप से निराई एवं गाद निकालने के कार्य में संलग्न किसानों के साथ अनौपचारिक बात–चीत में नीरगण्टी विभिन्न किसानों से राय एकत्र करते हैं। विशेषकर उनसे, जिनके पास अधिक भूमि होती है और तद्नुसार ही निराई व गाद निकालने की तिथि नियत होती है। सामान्यतः इसके लिए सोमवार का दिन निश्चित है और इस दिन एक प्रथा के तौर पर कोई भी किसान व उसका जानवर खेती सम्बन्धित अन्य गतिविधियों से नहीं जुड़ता है। सभी नहरों की सफाई शुरू से आखिर तक की जाती है, नहरों से घास निकालने एवं कीचड़ सफाई का कार्य सामूहिक रूप से सभी किसानों द्वारा किया जाता है। यदि कार्य अपूर्ण रह जाता है तो या तो सभी दूसरे दिन आकर उसे पूरा करते हैं या फिर उसे अगले सोमवार में पूरा कर दिया जाता है।

यदि कोई व्यक्ति बिना किसी पूर्व सूचना के गाद निकालने व निराई की गतिविधि में से अनुपस्थित रहता है तो उसे दण्ड दिये जाने का प्रावधान भी है। दण्ड का निर्णय समिति द्वारा किया जाता है, जो उस शिकायत पर आधारित होता है जिसे सम्बन्धित नहर का नीरगण्टी करता है। बुद्धिजीवी समिति को यह भी अधिकार है कि वह नियम विरूद्ध काम करने वाले के खेतों में पानी की आपूर्ति रोक दे। कुछ घटनाओं में, पानी दिये जाने में देरी का कारण व्यवहार में परिवर्तन हो सकता है। यद्यपि सिंचाई हेतु पानी आपूर्ति रोक दिया जाना एक बड़ी घटना है और यह सामान्यतः अभ्यास में नहीं है।

वर्तमान समय में जल प्रबन्धन की चुनौतियां

विभिन्न कारणों से साल–दर–साल तालाबों में पानी की उपलब्धता घटती जा रही है। इसके साथ सामाजिक स्थितियों में भी परिवर्तन हो रहा है। बुद्धिजीवी समिति स्वयं यह महसूस करने लगी है कि गांव में बहुत से परिवर्तन हो रहे हैं और यह परिवर्तन उनके समक्ष एक बड़ी चुनौती के रूप में उभर कर आयी है। उनके अनुसार इन परिवर्तनों में अनुपस्थित भू–स्वामियों की बढ़ती संख्या, नये नेताओं

का प्रादुर्भाव, बाहरी राजनीतिक प्रभावों एवं स्वयं प्रशासनिक / सरकारी संस्थान है।

मुडियानुर तालाब जो एक मजबूत पारम्परिक व्यवस्था का उदाहरण था, धीरे–धीरे अपना अस्तित्व खोता जा रहा है। यहां तक कि यह समझते हुए भी कि तंत्र कैचमेण्ट स्टेट्स से बहुत अच्छी तरह सम्बद्ध है, संस्थागत ढांचा कैचमेण्ट के मुद्दे को प्रभावी ढंग से सम्बोधित करने में सक्षम नहीं है। बुद्धिजीवी समिति का भू–उपयोग के बदलते स्वरूप अथवा खत्म हो रहे तालाब जैसे मुद्दे से कोई सरोकार नहीं रह गया है, फिर भी वे यह मानते हैं कि अभी भी तालाब आस–पास रहने वाले गरीब ग्रामीणों के लिए जीवनदायिनी है। गाद जांचने की वर्तमान व्यवस्था पूरी तरह असफल हो चुकी है। सरकारी मशीनरी लोगों को पेयजल उपलब्ध कराने हेतु उचित कदम उठा रही है, पर न तो उसके द्वारा और न ही समिति द्वारा घटते भू–जलस्तर एवं पानी की उपलब्धता के समानान्तर प्रभाव पर कोई चिन्ता व्यक्त की जा रही है। तथापि, इस पारम्परिक सामाजिक संस्थान से बहुत सी सीख मिलती है। मुडियानुर तालाब का प्रबन्धन निर्णय लेने की अब भी कार्यरत व्यवस्था का एक उदाहरण है। एक ऐसी व्यवस्था को बताता है, जो अतीत में सभी के लिए सामूहिक था, लेकिन अब जो कम से कम पाया जा रहा है। जब तक व्यवस्था चल रही थी, हो सकता है महिलाओं की सहभागिता के अभाव एवं जातिगत विभेद को लेकर इसकी आलोचना की जाती रही हो, पर यह कोई बड़ा मुद्दा नहीं है। इससे प्रबन्धन की पारम्परिक व्यवस्था बनने एवं विकसित होने की अधिक प्रभावी सीख मिली, जिससे बिल्कुल नवीन तकनीक से परिचय हुआ।

पारम्परिक व्यवस्था / तंत्र पर समझ बनने से यह भी पता चला कि प्राकृतिक सम्पदा के तौर पर तालाब को सामाजिक व्यवस्था में केन्द्रित किया गया है। मुडियानुर के तालाब और अन्य तालाब गरीब आबादी की स्थाई आजीविका के लिए एक बेहद उपयोगी कड़ी के रूप में हैं। सूखाग्रस्त क्षेत्रों में पानी की उपलब्धता चाहे वह फसल उत्पादन काम हो अथवा जानवरों के लिए या फिर नहाने व कपड़े धोने का काम सभी कठिन होता है।

बड़े किसानों के व्यक्तिगत कुएं पर जाने से उत्पन्न होने वाले विवाद से छोटे लोग बचते हैं और इसीलिए महिलाएं घरेलू उपयोग में आने वाले पानी उपयोग को घटाती हैं। पानी संकट से निपटने के लिए न सिर्फ मुड़ियानुर में इस तरीके को अपनाया गया है, वरन् मण्डीकल, कोथमंगला आदि जगहों पर भी तालाब के माध्यम से ऐसे किसानों को पानी की उपलब्धता करायी जाती है, जो पानी की कमी व अनिश्चितता के चलते धान की खेती करने में सक्षम नहीं हो पा रहे थे। इन सबको देखते हुए पानी का प्रयोग न्यायपूण ढंग से हो, धान की प्रजातियों का सावधानी पूर्वक चुनाव और कम पानी उपलब्धता के कारण तदनुरूप खेती के तरीके अपनाया गया।

इसमें एक अतिरिक्त परन्तु महत्वपूण बिन्दु यह है कि जलापूर्ति के संकट को देखते हुए समुदाय सदस्यों में साझा व्यवहार में पक्षपात नहीं किया जाता है।मुडियानुर तालाब से जो 7 गांव पानी साझा करते हैं वे एक से अधिक समुदाय द्वारा संसाधनों के प्रयोग व प्रबन्धन का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। विभिन्न स्तरों पर गठित बुद्धिजीवियों की समिति और प्रत्येक समिति द्वारा अधिकार आदान–प्रदान प्रत्येक स्तर पर स्वयं के संसाधन के प्रबन्धन अथवा बहुत से समुदायों द्वारा उपयोग का एक तन्त्र विकसित करता है। समिति प्रत्येक स्तर पर इसके सदस्यों के सामने अधिकार विकेन्द्रीकरण का एक उदाहरण भी प्रस्तुत करने हेतु उत्तरदायी है।

■

This article is an extract of the original publication Intercooperation in India (2005) Tradition meeting modernity: A case study on the management of Mudiyanur tank, Kolar District,Karnataka Working Paper 2 Intercooperation Delegation, Hyderabad, India. 33 pp.

Managing water for sustainable farming
LEISA INDIA, Vol. 12, No.3, Pg. # 10-13, September 2010

पृष्ठ 9 का शेष भाग...

से एक लिखित अभिलेख के रूप में किया गया तथा कुछ लघु फिल्में भी तैयार की गयीं। पारम्परिक स्थानीय खाद्य प्रसंस्करण को भी लघु स्तर पर धीरे–धीरे विकसित किया गया। इस प्रक्रिया में मसाले, काजू, आदि के उत्पादों से विभिन्न प्रकार के पारम्परिक व स्थानीय व्यंजनों को तैयार करना समाहित था। इसी क्रम में क्षेत्र में तैयार समूहों द्वारा अन्य एवं पशु स्वास्थ्य कर्मियों की टीम की अगुवाई में वार्षिक पकवान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसमें किसानों को स्थानीय खाद्य पदार्थों को ही रखने के लिए बाध्य किया जाता है ताकि स्थानीय खाद्य विविधताओं व परम्पराओं को प्रदर्शित किया जा सके।

आगामी कदम

आज पशु स्वास्थ्य कर्मियों की टीम रत्नागिरी के क्षेत्र में अपनी सहकारी समिति के पंजीकरण की प्रक्रिया में है। 15 सदस्य एक साथ मिलकर अपने खेतों में पारिस्थितिकी खेती करने के लिए वचनबद्ध हैं। यह सहकारिता यह निश्चित करेगी कि वे अपनी भूमि पर कौन सी फसलों को उगाना चाहते हैं तथा उन फसलों को वे कैसे उगायेंगे? इस सहकारिता का एक प्रमुख उद्देश्य अपने विचारों का शोध करना तथा दूसरे क्षेत्रों में अपने ज्ञान को बांटना भी है। यह समूह इस बारे में बहुत ही सचेत है कि क्षेत्र अपनी जैव विविधता व प्राकृतिक सुन्दरता में एक विशिष्टता प्राप्त करे ताकि भविष्य को और सुखद बनाने में उपयोगी हो सके। चुनौतियां आज भी विद्यमान हैं। आज एक तरफ जहाँ प्राकृतिक आपदायें जैसे चक्रवात, बाढ़, देर से वर्षा आदि फसलों को नुकसान पहुंचा रहे हैं। वहीं दूसरी ओर औद्योगीकरण के नाम पर आणविक शक्ति तथा तापीय विद्युत इकाई की एक–एक प्रस्तावित इकाईयां भविष्य में आम और काजू के पौधों के विनाश की अभिकारक बन सकती हैं। ऊर्जा की बृहद् स्तरीय मांग राज्य के लघु स्तरीय किसानों के सपनों पर भारी पड़ सकती है। फिर भी धन्यवाद है, ज्ञान एवं तंत्र की विविधता को, जिसके लिए समुदाय तैयार है।

■

एफ, लनताना गार्डेन्स, एन०डी०ए० रोड
बवधान, पूणे– 411021
ईमेल : anthra. pune@gmail.com

Livestock for Sustainable Livelihoods
LEISA INDIA, Vol. 12, No.1, Pg. # 6-7, March 2010

खेती के लिए, खेती से सीखना

नन्दीश

किसी भी अन्य व्यवसाय की तरह खेती में भी निष्ठा, आपसी समझदारी, लगातार सीखने, हमेशा नये विचारों को अपनाने और इन सबसे ऊपर खेती को विशाल पारिस्थितिकी तंत्र के एक भाग के तौर पर देखने की इच्छा की आवश्यकता होती है। यहां पर एक युवा किसान की कहानी दी गयी है, जो अत्यन्त देख–भाल करते हुए न केवल अपनी खेती को पोषित करता है, वरन् पर्यावरण के प्रति भी संवेदनशील है।

स्वभावतः कलात्मक निर्माण में रूचि एवं विज्ञापनों को देखने के चक्कर में मैंने स्कूली शिक्षा को गंभीरता से नहीं लिया और मेरी पढ़ाई छूट गयी। वर्ष 1998 में परिस्थितियों ने मुझे खेती करने के लिए विवश कर दिया। यहां यह तथ्य उल्लेखनीय होगा कि भले ही मैं खेतिहर परिवार से था, परन्तु मैं कृषि से पूरी तरह अनजान था। प्रारम्भ में मैंने अपने चारों तरफ हो रही कृषिगत गतिविधियों को देखा। तत्पश्चात् मैंने अपने परिवार से खेती का सारा काम इस शर्त के साथ अपने हाथ में ले लिया कि कोई भी मेरे काम में हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस शर्त ने अधिक उत्पादन के लिए मेरे ऊपर दबाव बनाया और मैंने कृषि विश्वविद्यालयों एवं विभागों द्वारा दी गयी सिफारिशों एवं सुझावों के अनुसार खेती करना शुरू कर दिया।

खेती में लगातार काम करते हुए मैंने यह अनुभव किया कि खेती एक श्रमसाध्य कार्य है और इसमें लागत अधिक एवं लाभ कम है। इसी एक बिन्दु पर मैंने निष्कर्ष निकाला कि खेती अर्थविहीन और बेकार है तथा इसे पुनः शुरू करना बेवकूफी भरा होगा। मुझे इस काम में कोई मजा नहीं आया। मैंने दृढ़ता से यह निश्चय किया कि यदि इसी तरीके से खेती होगी तो इसे जारी रखने में मुश्किल आयेगी। हालांकि मैं लम्बे समय तक खेती करने के बारे में निश्चय नहीं कर पा रहा था, लेकिन इसके अलावा मेरे पास और कोई विकल्प भी नहीं था।

खेती की कुंजी : जानकारी

मैं चीजों को देखने, समझने और करने में हमेशा ही विभिन्न नज़रिये का प्रयोग करता हूं और इसी तरीके से मैंने खेती में भी विकल्पों के बारे में सोचा। वर्ष 2000 में, मैंने एक पत्रिका में मसानोबू फुकुओका का एक लेख पढ़ा, जो मेरी जिन्दगी का सबसे बड़ा खज़ाना था। मैंने पाया कि जुताई रहित, निराई रहित, उर्वरक रहित एवं कीटनाशक रहित खेती प्राकृतिक खेती के चार सिद्धान्त हैं और यही सही तरीका है खेती करने का, लेकिन इसके लिए समय की आवश्यकता थी। इसी पत्रिका में मैंने फुकुओका द्वारा लिखित लेख ''दलहन का तर्क'' भी पढ़ा, जिसमें यह स्पष्ट उल्लिखित था कि फसल से पहले, बाद में और फसल के साथ कौन सी दलहन और क्यों लगायें। मैंने इसका परीक्षण करना प्रारम्भ कर दिया। मेरी समझ में आया कि फसलों में विविधता न होने के कारण मुझे सफलता नहीं मिली। मैंने पाया कि हरित मल्चिंग और हरित खाद मेरी खेती तंत्र के लिए सबसे अच्छी भूमिका निभा रहे हैं। मैंने दलहनी फसलों, पौधों और झाड़ियों की खेती करना प्रारम्भ कर दिया।

मैंने अपने खेत में एक वर्षीय, बहु वर्षीय और बारहमासी लतादार, झाड़ीदार और पेड़ों की नई–नई प्रजातियों को लगाया। मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि खेत को स्वस्थ बनाये रखने में सभी तरह के पौधों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मैंने कन्द वाले पौधों को लगाना प्रारम्भ कर दिया, क्योंकि इसकी जड़ें मृदा के भुराभुरापन को बढ़ाती हैं। इसी प्रकार जहाँ दलहनी फसलें नाइट्रोजन स्थिरीकरण में सहायक होती हैं, वहीं फसलों की विविधता मुख्य फसल को कीटों एवं रोगों से बचाने में सहायक होती हैं, बारहमासी घासों की पत्तियां पौधों के लिए अधिकाधिक जीवाश्म उत्पन्न करती हैं, झाड़ियां सूरज की तेज रोशनी को रोकने में सहायक होती हैं। कुछ हानिकारक पौधे भी होते हैं, जो पशुओं को खेत चरने से रोकते हैं। तेजी से बढ़ने वाली झाड़ियों और पेड़ से बनी खेत की चहारदीवारी अधिक जीवाश्म पैदा करने में तो सहायक होती ही है, तेज हवाओं से फसलों का बचाव भी करती है और बांस के पौधे तीव्र गर्मी के दिनों में प्राकृतिक रूप से तापमान को नियन्त्रित करने का एक आदर्श माध्यम होते हैं।

इसी दौरान, मैंने लीज़ा – स्थाई खेती के लिए कम लागत तकनीक के विषय में भी सुना, जिसने मुझे बहुत ही आकर्षित किया। इस समय तक मैं यह महसूस करने में सक्षम हो चुका था कि कम लागत ही स्थाईत्व की कुंजी है। लीज़ा तकनीक अपनाने से पहले, मैंने सबसे पहले अपनी धान की खेती के लागत–लाभ का विश्लेषण किया। मुझे यह समझ में आया कि मैंने अपनी पूरी लागत का 45 प्रतिशत खाद व कीटनाशकों पर खर्च किया। तब मैंने इसे कम करने हेतु अपना लक्ष्य निर्धारित किया।

एक कृषिगत पत्रिका में छपे ईरी वैज्ञानिक के एक लेख ने मेरे अन्धविश्वासों को दूर करने में सहायता की, जिन्हें मैं अपने दिमाग में लिये घूमता था। उन्होंने लिखा था कि धान की रोपाई से 40 दिनों तक किसी भी प्रकार के कीटनाशकों के प्रयोग की कोई आवश्यकता

यहाँ हर ओर हरियाली है।

नहीं होती, क्योंकि इससे मित्र जीवाणु मर जाते हैं और प्रकृति का संतुलन बिगड़ जाता है। इसके बाद प्रजातियों के चयन, पोषण हेतु हरित खाद, जल प्रबन्धन और कुछ और संशोधनों के माध्यम से मुझे कीट–व्याधियों से निपटने में सहायता मिली।

प्रकृति से सीखना

धान के पौधों की रोपाई के बाद शुरूआती दौर में तोतों से मुझे बहुत समस्या थी, जो प्रस्फुटित धान को खा जाते थे और उनके आक्रमण को रोकना बहुत ही मुश्किल था। लेकिन बाद में मुझे समझ में आया कि वे मेरे द्वारा प्रयोग किये गये बीज दर को सही कर रहे हैं। उन्होंने मुझे सिखाया कि मैं बहुत अधिक बीज का प्रयोग करता हूं। दरअसल मैं उस समय प्रति एकड़ 25 किग्रा0 की दर से बीज का प्रयोग कर रहा था, जिससे घने जमाव की वजह से पौधों की जड़े कमजोर हो जा रही थीं और उत्पादन कम हो रहा था। अतः मैंने अच्छा उत्पादन पाने के लिए प्रति एकड़ 5 किग्रा0 बीज घटाया, जिससे कि जड़ें मजबूती से जम सकें और पानी तथा छोटे कीड़ों का सामना मजबूती से कर सकें। इसी तरह खेत में चूहों को जांचने के लिए मेड़ों और सीमाओं पर ग्लायरिसेडिया को लगाया। इसके अतिरिक्त हरित खाद का उत्पादन किया, जो चहारदीवारी के रूप में खेत की रक्षा भी करते हैं। मैंने सोचा था कि सभी कीड़े–मकोड़े मेरे खेत व फसल को नुकसान पहुंचाते हैं, परन्तु बाद में मुझे समझ में आया कि वे मेरी गलतियों को ठीक कर रहे हैं और यह कह रहे है कि मुझे खुले दिल व दिमाग से सोचने व समझने की आवश्यकता है। मैंने महसूस किया कि गतिविधियों को अपनाने का मेरा प्रत्येक कदम सही नहीं है और इसमें सुधार की आवश्यकता है।

खेती पर मेरे दृष्टिकोण

स्थानीय कृषिगत जलवायुविक परिस्थितियों के अनुसार फसल का चयन खेती को आसान बनाता है। वर्तमान समय में मैं 75 प्रतिशत से अधिक काम और लागत बचा ले रहा हूं और अपने खेत से पहले की अपेक्षा औसतन 50 प्रतिशत अधिक उत्पादन ले रहा हूं।

अपने स्वयं के अवलोकन एवं अनुप्रयोगों से सीखना महत्वपूर्ण होता है और इसीलिए मैं हर साल एक निश्चित दिन मानचित्रण द्वारा आंकड़े एकत्र करता हूँ। इससे मुझे अपने खेत के सभी मामलों की सांख्यिकी समझ रखने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए मैंने अपने खेत में पिछले दस वर्षों से धान के लिए एक ही लागत बनाये रखी है। जबकि इन दस वर्षों में मेरा लाभ प्रति एकड़ दस गुना बढ़ा है। इसके अतिरिक्त खेत के प्रत्येक खर्च एवं गतिविधि को खेत पर निरीक्षित करने एवं दस्तावेजित करने की आवश्यकता है। यह भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करेगा कि आने वाले दिनों में हम खेती में क्या करें और क्या न करें। इससे हमें सीखने, याद करने और अपनी गतिविधियों को सही करने में मदद मिलती है। यदि यह कहा जाये कि हमारे अन्दर ही सीखने के लिए बहुत कुछ है तो अतिश्योक्ति न होगी। खेती के लिए सामान्य ज्ञान, समझ और सभी जीवित प्राणियों के साथ तादात्म्य बनाये रखने की आवश्यकता होती है।

स्थाई खेती की दिशा में सोलह से भी अधिक वैकल्पिक रास्ते सुझाये गये हैं – जैविक, प्राकृतिक, कम लागत, स्थाई संस्कृति, जैव गतिशील, शून्य जुताई, संरक्षित जुताई इनमें से कुछ उल्लेखनीय हैं। यहां यह बताना समीचीन होगा कि ये सभी जानकारी के प्रकार हैं न कि सबसे अच्छे, अन्तिम व अति आवश्यक हैं। कई लोगों को रसायनिक खेती इसलिए अच्छी लगी, क्योंकि वे यह सोचते हैं कि यह एक आसान रास्ता है, लेकिन मैं अनावश्यक गतिविधियों को कम करते हुए पर्यावरणसम्मत खेती करता रहा। किताबें, गतिविधियां और जानकारी ये सभी हमारे स्वस्थ सोच–विचार के लिए महत्वपूर्ण हैं। खेती का कोई ऐसा तैयार तरीका नहीं है, जिसे अनुसरित किया जा सके। विशेषकर खेती में तो ''काटो और चिपकाओ'' तरीका सम्भव ही नहीं है।

धान में हरित खाद

दिसम्बर में धान की कटाई के बाद हमने हरित खाद हेतु 15–20 प्रजातियों की बुवाई की। इसी के साथ फरवरी में हमने हरा चना की बुवाई की, जिसकी कटाई 3 महीने बाद मई के अन्त में हुई। पुनः हमने चने की बुवाई की। इस रेंगने वाली फसल से दोहरी मात्रा में जीवाश्म मिलता है और ये सभी रेंगकर चढ़ने वाली फसलें प्रथम तल की तरह कार्य करती हैं व जुलाई–अगस्त तक कट जाती हैं। ये सभी फसलें विभिन्न उंचाई की होती हैं, इनमें कुछ तो 14 फीट की उंचाई तक की होती हैं। इससे सूर्य की किरणें सघन हरित खाद में प्रवेश नहीं कर पाती हैं। बहुवर्षीय घासें और खर–पतवार बिना सूर्य के प्रकाश के बढ़ती रहती हैं। 2 फीट के घेरे में फैली जड़ें भूमिगत मृदा को जकड़े रहती हैं। जब इसके अन्दर मिट्टी मिलाई जाती है, तो 3–4 इंच मिट्टी जैव सामग्रियों से परिपूर्ण रहती है। अमलतास, नील, सनई, दाली वाली फसल, तिल, सरसों, सूर्यमुखी, मोटे अनाज, ज्वार, धनिया और अन्य बहुत सी दलहनी फसलों का प्रयोग हरित खाद के रूप में किया जाता है।

धान की खेती के बाद प्रत्येक 45 दिन पर लगातार तीन बार हरित खाद देना अधिक प्रभावी होती हैं इससे पहले वर्ष में किसी भी प्रकार के खाद देने की आवश्यकता नहीं होती है। 2–3 वर्षों में मृदा की गुणवत्ता में थोड़ा सा ह्रास आ सकता है। मैंने तो यह पाया है कि मृदा को समृद्ध बनाये रखने का सबसे सरल, तीव्र और सस्ता तरीका केवल धान उगाने वालों के लिए ही संभव है।

''एक आदर्श खेत वह होता है, जहां आप ठण्डी हवा का अनुभव कर सकें, मृदा की सजीवता व संवेदनशीलता महसूस कर सकें, फूलों–फलों, विभिन्न प्रकार के कीडे–मकोड़ों को देख सकें, विविधि प्रकार की सब्ज़ियों व फलों का स्वाद ले सकें और मधुमक्खियों, चिडियों और जानवरों की आवाज़ सुन सकें। यदि एक शब्द में कहा जाये तो– ''खेत एक ऐसा स्थान है, जहां आप सभी तरह की संवेदनाएं महसूस कर सकें।''

खेतों की सफाई करने के बजाय मैं हमेशा ही हरित संस्कृति का अनुसरण करता रहा हूँ। एक आदर्श खेत वह होता है, जहां आप ठण्डी हवा का अनुभव कर सकें, मृदा की सजीवता व संवेदनशीलता महसूस कर सकें, फूलों–फलों, विभिन्न प्रकार के कीडे–मकोड़ों को देख सकें, विविधि प्रकार की सब्ज़ियों व फलों का स्वाद ले सकें और मधुमक्खियों, चिड़ियों और जानवरों की आवाज़ सुन सकें। यदि एक शब्द में कहा जाये तो – ''खेत एक ऐसा स्थान है, जहां आप सभी तरह की संवेदनाएं महसूस कर सकें।''

जूट और मखमली सेम मेरे प्रमुख कृषिगत उपकरण हैं। मेरे खेत में उगने वाली सभी फसलों की जरूरतों और समाधान के लिए मैं केवल हरी खाद को देखना और सुनना पसंद करता हूं। प्राकृतिक तरीके से बिना जुताई किये धान की खेती करना मेरे लिए एक चुनौती है और मैं इसे पूरा करने का प्रयास कर रहा हूं। मैंने स्थायी रूप से ऊंचे स्थल पर धान की खेती करने की कोशिश, परन्तु मुझे सफलता नहीं मिल सकी।

एक अन्य चुनौती के रूप में गर्मियों में जबकि पानी की कमी होती है, उस समय औद्यानिक गतिविधियों को बढ़ावा देना है। ये सभी चुनौतियां हमें और हमारी खेती को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगीं।

■

शिकारीपुर तालुक
जिला सिमोगा, चुर्चीगुण्डी
कर्नाटक

Youth in Farming
LEISA INDIA, Vol. 12, No.2, Pg. # 20-21, March 2011

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English

V.1, No. 1, 1999 - Markets for LEISA and Organic products
V.1, No. 2, 1999 - Stakeholders in Research
V.1, No. 2, 1999 - Restoring biodiversity

V.2, No. 1, 2000 - Desertification
V.2, No. 2, 2000 - Farmer innovations
V.2, No. 3, 2000 - Farming in the forest
V.2, No. 4, 2000 - Monocultures towards sustainability

V.3, No. 1, 2001 - Coping with disaster
V.3, No. 2, 2001 - Go global stay local
V.3, No. 3, 2001 - Lessons in scaling up
V.3, No. 4, 2001 - Biotechnology

V.4, No. 1, 2002 Managing Livestock
V.4, No. 2, 2002 - Rural Communication
V.4, No. 3, 2002 - Recreating living soil
V.4, No. 4, 2002 - Women in agriculture

V.5, No. 1, 2003 - Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003 - Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003 - Access to resources
V.5, No. 4, 2003 - Reversing Degradation

V.6, No. 1, 2004 - Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004 - New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004 - Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004 - Farming with nature

V.7, No. 1, 2005 - On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005 - More than Money
V.7, No. 3, 2005 - Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005 - Towards Policy Change

V.8, No. 1, 2006 - Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006 - Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006 - Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006 - Nurturing Ecological Processes

V.9, No. 1, 2007 - Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007 - Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007 - Healthy Produce, People and Environment
V.9, No. 4, 2007 - Ecological Pest Management

V.10, No. 1, 2008 -Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.3, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations

जीवन कौशल और आजीविका

मंजूनाथ एच

किसान परिवारों के लड़के खेती की बढ़ती लागत एवं अन्य समस्याओं के कारण खेती को घाटे का सौदा मानते हुए कृषि से हटकर अन्य विकल्पों की तलाश कर रहे हैं। बदूकू ने इन युवा किसानों की मदद से इस समस्या को पहचाना और उन्हें ये महसूस कराया कि खेती एक स्थाई आजीविका विकल्प के तौर पर है और स्थाई खेती की पद्धति में उनकी क्षमता अभिवृद्धि की जा सकती है।

कृषिगत भूमि के ह्रास, पानी के अन्धाधुंध प्रयोग, रसायनिक उर्वरकों के बेतहाशा प्रयोग, पर्यावरणीय संतुलन को बिगाड़ते पर्यटन और सघन ऊर्जा आधारित उत्पादन ये सभी मिलकर जलवायु परिवर्तन को बढाने का कारण बन रहे हैं और साथ ही किसानों, पारम्परिक समुदायों और असंगठित मजदूरों के बिखराव एवं टूटन का कारण भी बन रहे हैं। आज छोटे किसानों के समक्ष पर्यावरण सम्मत आजीविका तंत्र सुदृढ़ करने हेतु बहुआयामी चुनौतियां हैं। उत्तरजीवितता अथवा जीवन का अर्थ के रूप में बदूकू है, संभावित समाधान की खोज करने हेतु एक छोटा कदम है। बदूकू, जीवन कौशल और आजीविका के एक स्कूल के रूप में है, जो एक स्वयंसेवी संस्था संवाद द्वारा तैयार किया गयी है। संवाद पिछले 21 वर्षों से युवाओं के साथ काम कर रही है। सामाजिक असमानता और आर्थिक रूप से पिछड़ेपन के कारण बंगलौर शहर के आस–पास रहने वाले युवा वर्ग विशेषकर दलित युवाओं की समस्या को देखते हुए दो वर्षों तक की जाने वाली प्रक्रिया का परिणाम बदूकू है। इस पहल के माध्यम से, हमें स्थाई आजीविका और उद्योगों को स्थापित करने में मदद मिली, जिसकी वजह से वैकल्पिक तकनीकों और गतिविधियों के माध्यम से पारिस्थितिकी एवं सामाजिक मुद्दों पर समझ बन सकी।

आज के दौर में हमारे सामने सामाजिक और पारिस्थितिकी चुनौतियों की वजह से उत्पन्न आजीविका संकट के इस दौर में बदूकू अर्थपूर्ण आजीविका उपलब्ध कराने का एक अवसर है। युवा वर्ग के लिए, बदूकू कॉलेज एक प्रस्ताव देता है, जहां वे रचनात्मक और पुनरूत्पादक कार्य के संयुक्त गतिविधियों का एक तरीका अपना सकते हैं। यह अनोखा कालेज वैकल्पिक आजीविका पर पाठ्यक्रम प्रस्तुत करता है, जहां वैकल्पिक तकनीकों/सन्दर्भों का प्रयोग स्थाई आजीविका तैयार करने के लिए किया जाता है। पिछले तीन वर्षों में हमने स्थाई कृषि, शहरी वर्षा जल संग्रहण समाधान, सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा और शिशु देख–भाल प्रबन्धन जैसे विषयों पर पाठ्यक्रम तैयार व पूर्ण किये हैं।

स्थाई कृषि पर पाठ्यक्रम

आज के युवा वर्ग का मानना है कि खेती एक सम्मानजनक कार्य नहीं है और इस कारण वे इससे विमुख हो रहे है। परिणामतः किसान परिवारों का युवा वर्ग खेती के बजाय आजीविका के अन्य विकल्पों की तरफ झुक रहा है और कुछ छोटे किसान अपने खेतों को बड़े किसानों को बेच दे रहे हैं। स्थाई खेती के हमारे पाठ्यक्रम मसानोबू फुकुओका के दर्शन पर आधारित सम्पूर्ण नये तरीके के साथ खेती को युवा वर्ग के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। ये पाठ्यक्रम किसानों द्वारा झेली जाने वाली समस्याओं जैसे कृषि लागत की बढ़ती कीमतें, मानसून की अनिश्चितता, उसर होती मिट्टी और अस्थाई बाजार व्यवस्था का प्रतिउत्तर हैं।

हमने वर्ष 2008–09 के दौरान इस पाठ्यक्रम की शुरूआत की। खेती के जैविक तरीकों, मिश्रित खेती, मूल्य संवर्धन और जैविक सत्यापन पर लोगों की दक्षता बढ़ाने व जानकारियों को आवश्यक रूप से देने के लिए 30 दिनों का सघन कार्यक्रम किया गया। हमारी प्रशिक्षण से निकले 10 मुख्य आयामों के रूप में जैविक किसानों के साथ आपसी सम्पर्क एवं विचार, विपणन केन्द्रों का प्रबन्धन उपभोक्ता, जागरूकता और व्यवस्थित क्रियान्वयन थे।

बाक्स : 1 प्रशिक्षण की रूपरेखा

रसायनिक खेती की जटिलता को प्रतिभागियों द्वारा समझना

↓

प्रतिभागियों को हरित क्रान्ति के विष क्रान्ति में बदलने की समझ उत्पन्न होना

↓

प्रतिभागियों ने खेती में समानता और संयोजन की आवश्यकता को महसूस किया

↓

प्रतिभागियों ने हरित क्रान्ति निवेश के लिए विभिन्न वैकल्पिक उपायों के साथ प्रयोग करना प्रारम्भ किया

↓

प्रतिभागियों ने महसूस किया कि खेती के लिए सिंचाई आवश्यक नहीं है।

↓

पर्यावरण सम्मत घटकों को अपनाने का प्रयास

↓

खाद्य, बीज और जल पर सम्प्रभुता के लिए काम करना

0–5 एकड़ खेती वाले किसान परिवारों के युवाओं को स्थाई खेती गतिविधियों में प्रशिक्षित कर उनको प्रदर्शन के माध्यम से यह बताया गया कि किस प्रकार छोटी जोत वाले किसानों के लिए खेती एक व्यवहार्य व स्थाई विकल्प है। जैविक खेती कृषि आधारित विविधता के साथ संयुक्त है। टिकाऊ खेती की परिकल्पना और अभ्यास तथा जैविक खेती की तरफ परिवर्तन को प्रचलन में लाना एक लम्बी प्रक्रिया है। मिश्रित फसलों, खेतों में तैयार होने वाली खाद, तरल खाद, गृहवाटिका, जैव कीटनाशक, मृदा नमी और उर्वरता, जल संरक्षण आदि के बारे में क्षमता अभिवृद्धि और जानकारियों का दिया जाना इस मुख्य सामग्री में शामिल थे। 24 दिनों के लिए तैयार इस पाठ्यक्रम का विस्तार 8 माह के एक फसल चक्र में विस्तारित था।

टिकाऊ खेती की अवधारणा और गतिविधि तथा जैविक खेती को प्रचलन में लाना एक लम्बी प्रक्रिया है।

प्रशिक्षण के बाद फालोअप

प्रशिक्षण के बाद, हमने किसानों के यहां लगातार भ्रमण किया, अपने छात्रों और उनके परिवार वालों से भी मिलते रहे। प्रशिक्षण के बाद सहायता और भ्रमण के दौरान अनुश्रवण तथा उनकी खेती हेतु दिये जाने वाले दिशा निर्देशों से किसानों को टिकाऊ खेती के बारे में और अधिक स्पष्टता हुई और इस प्रकार उन्हें अधिक आत्मविश्वास के साथ स्थाई खेती की ओर अग्रसर होने में मदद मिली। इस तरीके से, उनके खेतों पर हमारे भ्रमण ने कृषि आधारित उनकी जानकारियों को और बढ़ाया।

उत्पादन के अतिरिक्त अन्य गतिविधियाँ

हमने बेहतर विपणन के लिए एक रणनीति तैयार की और उसके तहत् एक अनोखा कार्यक्रम आयोजित किया। हसीरू सांथे एक ऐसा मंच था, जहां जैविक उपभोक्ता मिलते थे और उन किसानों के साथ संवाद स्थापित करते थे, जो उनके लिए सुरक्षित खाद्यान्न उत्पादित करते थे। हसीरू सांथे निम्नवत् उद्देश्यों के साथ नियोजित था–

1. सुरक्षित और स्वस्थ खाद्यान्न उपलब्ध कराना।
2. पर्यावरण सम्मत उत्पादन गतिविधि को प्रोत्साहित करना।
3. बिचौलियों को हटाना एवं किसानों को बेहतर मूल्य उपलब्ध कराना।
4. विश्वास की संस्कृति कायम करना।
5. उत्पादकों को उनके खाद्यान्नों से सम्बन्धित उपभोक्ता अधिकार से परिचित करना।

स्थानीय स्तर पर प्रचलित खाद्यान्नों के उत्पादन एवं वितरण हेतु हसीरू सांथे माह में एक बार आयोजित की जाती थी। "संवाद" के पांच किसान हमेशा हसीरू सांथे में सहभागिता निभाते थे और अपने जैविक उत्पादों की आपूर्ति करते थे। हमारे किसान विविध प्रकार की जैविक सब्जियों व फलों को बेचते थे। खाद्यान्न उत्पादनों में नाश्ता, अनाज, अचार, आटा, औषधीय बाम और मलहम, पौष्टिक बाजरा, नमकीन, पेय पदार्थ, खाद, अण्डे आदि सभी उत्पाद सहभागी सुनिश्चित योजना के माध्यम से किसानों द्वारा सत्यापित होते थे।

परिणाम

बहुत से युवा किसानों ने पाठ्यक्रम से प्राप्त जानकारियों को अपने खेतों में अपनाया और वे अच्छी तरह कर रहे हैं। सघन प्रशिक्षण के कारण उन्होंने 24.72 प्रतिशत स्थायित्व प्राप्त किया है। प्रशिक्षण के पहले और बाद में खेती के स्थायित्व की गिनती और मूल्यांकन किया गया, जिसमें पाया गया कि प्रशिक्षण के पहले स्थायित्व गुणांक का स्तर 32.42 था तो प्रशिक्षण के बाद इसका स्तर 57.14 था।
बड़ी संख्या में युवा किसानों ने इन जानकारियों को अपने खेतों पर अपनाया। उदाहरण के लिए, सुरेन्द्र ने धान और टांगुन दो फसलों

खाद्य सुरक्षा के लिए अद्भुत मोटे अनाजों को प्रदर्शित करता सुरेन्द्र

छोटी जोत में बड़े उत्पादन संभव करता गोपाल

की खेती शुरू की। इन्होंने टांगुन की पन्द्रह से अधिक प्रजातियों तथा धान की दो प्रजातियों को लगाया और अन्ततः उन्होंने यह पाया कि उनकी खेत की परिस्थितियों के हिसाब से धान की पांच प्रजातियां एवं टांगुन की एक प्रजाति उपयुक्त है। इन्होंने खरगोश पालन, वर्मी कम्पोस्ट बनाना और अजोला की खेती भी प्रारम्भ की। पूरे गांव को जैविक में बदलने के लिए सुरेन्द्र अन्य किसानों के साथ भी काम करते हैं।

अब इस कार्यक्रम को एक अनुभवात्मक प्रतिदर्श के रूप में आगे बढ़ाया जा रहा है। प्रशिक्षित प्रतिभागी अन्य नवयुवक किसानों को उनके गांव में उत्प्रेरित कर रहे हैं तथा उन्हें एक प्रशिक्षित प्रतिभागी के खेत पर एकत्रित कर प्रशिक्षण दे रहे हैं। अब हमारे प्रशिक्षित प्रतिभागी किसानो को हमारे कार्यक्रम के दौरान सलाह देने वाले परामर्श दाता की भूमिका निभा रहे हैं।

भविष्य की उम्मीद

मैं गौरवान्वित हूं एक जैविक किसान बनकर,
मैं टिकाऊ उत्पादन लेने में सफल हुआ हूं।
मैंने जड़ी–बूटियों के बिक्री से 1.5 लाख कमाया है
और मैं अब अपने बच्चों को शिक्षा देने में सफल हो सका हूं।
मैं अपनी भूमि को कभी नहीं बेचूंगा और उन्हें जैविक खेती में परिवर्तित करूंगा।
मैं स्थानीय बीजों के आदान–प्रदान करते हुए सामुदायिक बीज बैंक प्रारम्भ करूंगा।

ये भावनाएं संवाद द्वारा प्रशिक्षित नवयुवा किसानों के भाव संगम कार्यक्रम में प्रशिक्षित युवा किसानों द्वारा उच्चारित की गयी। हम लोग प्रसन्न हैं कि हमारे कामों के परिणाम दिखने लगे हैं। न केवल ये युवा किसान, अपने खेतों पर जैविक खेती कर रहे हैं, वरन् ये दूसरे गांवों के किसानों को भी अभिप्रेरत करने का कार्य कर रहे हैं। जबकि हमारा प्रयास अभी प्रारम्भिक अवस्था में है, फिर भी हमें विश्वास है कि इसका विस्तार बड़ी तेजी से दूर तक होगा ताकि हम वातावरण और लोगों को बचा सकें।

लघु ही सुन्दर है

गोपाल शून्य कृषि कर रहे हैं। शून्य कृषि कृषि की एक व्यवस्था है, जिसमें किसान विभिन्न प्रकार की कृषिगत गतिविधियों को एक ही साथ एक निश्चित खेत में विभिन्न साधनों से अपनी आय को बढ़ाने के लिए करते हैं।

गोपाल ने अपने खेत के एक–एक इंच की भूमि को प्रयोग करने की एक योजना बनाई। उन्होंने तीस सागौन व 32 मेलियादूबिया के पौधों को खेतों की मेड़ों पर कंटीले तारों के किनारे–किनारे लगाया। उसके बाद चमेली तथा घासों को मेड़ के बाहर और अन्दर लगाया। अन्दर की ओर एम–5 और बी–1 प्रजाति का शहतूत के पौधे लगाये। इनके कतारों के मध्य उन्होंने विभिन्न प्रकार की सब्जियों तथा औषधीय पौधों को लगाया। खेत से प्राप्त सभी अपशिष्टों को दो – तीन महीने तक एकत्र कर ढेरी के रूप में रख दिया है। इस दौरान वे सभी अपशिष्ट वायुजीवी उर्वरक के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं, और फिर इन्हें पानी के साथ मुख्य खेत में बहा देते हैं।

वह पशुओं के अपशिष्ट और गोबर अपने खेत के कोने में एकत्र करते हैं। खाद के गढ्ढे के चारों ओर इन्होंने अरण्डी के पौध लगाकर उनपर लतादार सब्जियां चढ़ा दी हैं, जो उनके खाद गढ्ढे को पर्याप्त छाया देते हैं। वह अरण्डी से कुछ आय प्राप्त कर लेते हैं। पिछले वर्ष 3 किग्रा0 अरण्डी बीज बेचने से इन्हें 150 रू0 प्राप्त हुए तथा लतादार सब्जियों से मिलने वाले उत्पाद का प्रयोग अपने घर किया।

वह अधिक तथा टिकाऊ उत्पादन प्राप्त करने के लिए मिश्रित खेती में विश्वास करते हैं। उन्होंने एक और प्रमुख बात कही कि – मेरी खेती एक ए0टी0एम0 की तरह है। मैं अपने खेत से प्रतिदिन आमदनी प्राप्त करता हूं। पिछले वर्ष एक एकड़ से भी कम भूमि में इन्होंने मात्र दो से तीन घण्टे काम करके रू0 1,19,650.00 रू0 की आमदनी प्राप्त की थी। पिछले बीस वर्षों में इन्होंने अपने खेतों में रसायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग रत्ती भर भी नहीं किया है और अब वह अपने खेत में बिना जुताई की कृषि करने की योजना बना रहे हैं। विगत दो वर्षों में एक बार भी इन्होंने अपने खेतों की जुताई नहीं की है।

गोपाल कर्नाटक के रामनगर के आस–पास बसने वाले युवा किसानों को शून्य खेती करने के लिए प्रेरित कर रहे हैं और इस हेतु रामनगर के युवा किसानों को शामिल कर एक "नामोरा श्री टीम" भी बनाया है।

■

संवाद- बदूकू कॉलेज
नं० 1900 गौथा बडवाने
निकट केम्पेगौड़ा सर्किल, आईजोर
रामनगर, कर्नाटक

Youth in farming
LEISA INDIA, Vol. 13, No.1, Pg. # 8-10, March 2011